बापू – मेरी माँ

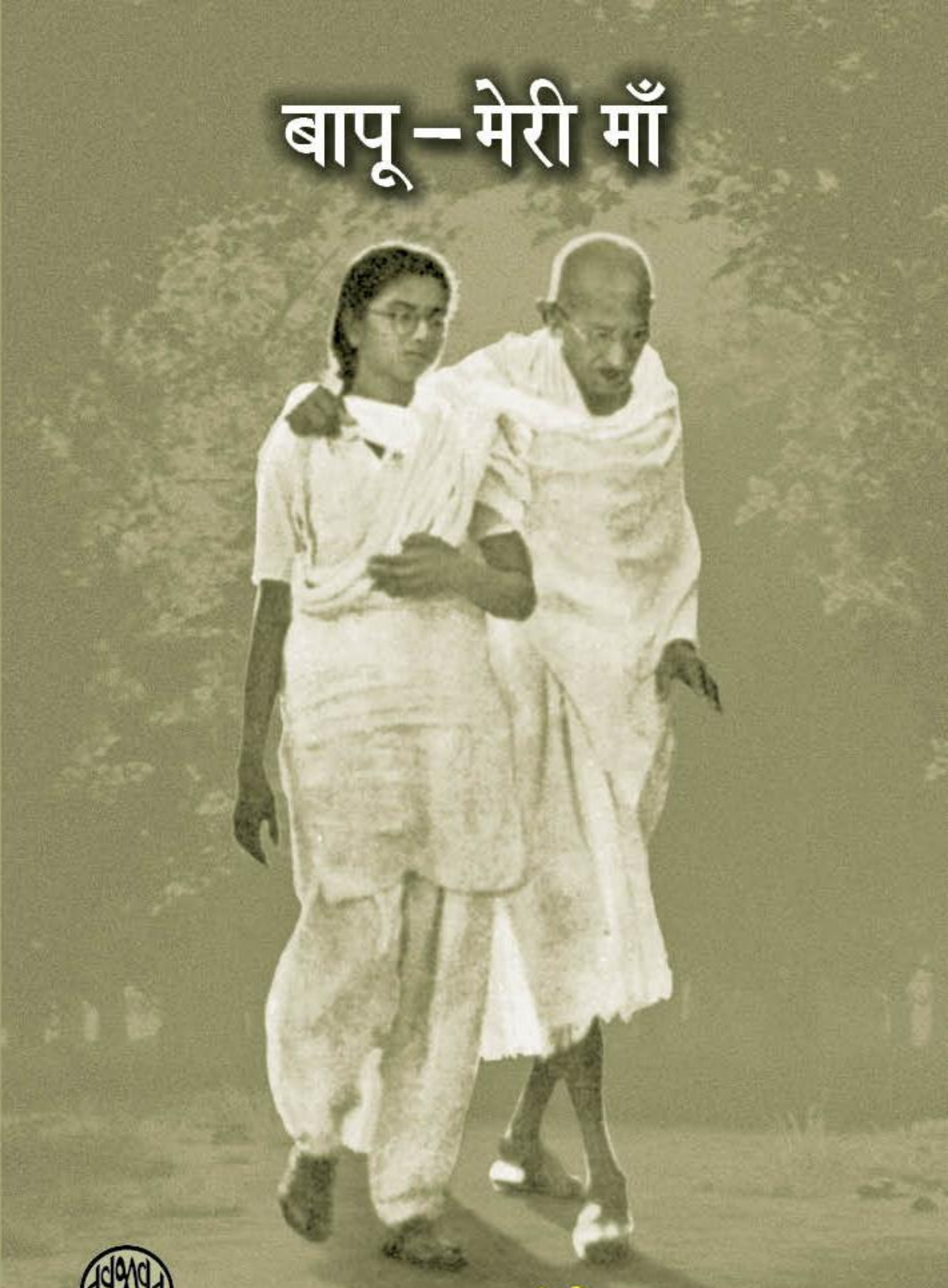

मनुबहन गांधी

बापू – मेरी माँ

लेखिका

मनुबहन गांधी

अनुवादिका

कुरंगीबहन देसाई

मुद्रक और प्रकाशक

विवेक जितेन्द्र देसाई

नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद- ३८० ०१४

फोन : ०७९-२७५४०६३५, २७५४२६३४

E-mail: sales@navajivantrust.org

Website: www.navajivantrust.org

प्रस्तावना

कुमारी मनुबहन गांधी के 'भावनगर समाचार' में छपे हुए करीब एक दर्जन लेख पाठकों को पसंद आये बिना न रहेंगे | में समझता हूँ कि मनुबहन की लेख लिखने की यह पहली ही कोशिश है | इनका महत्त्व यह है कि ये पूज्य गांधीजी के स्वभाव और आखिरी दिनों के कामों पर अच्छी तरह से रोशनी डालते हैं | १९४६ के आखिर में जबसे मनुबहन पूज्य बापूजी की साथ हुई तबसे उन्होंने वहाँ की अपनी डायरी भी रखी है | जबसे नोआखली का मिशन शुर हुआ तबसे वह बापूजी के साथ आखिर तक रहीं | इस वजह से इनकी डायरी बहुत महत्त्व की होगी | और पढ़ने वाले इसके लिखने के लिए मनुबहन को धन्याद दिए बिना नहीं- रहेंगे | इन गुजरती लेखों का अनुवाद लेखिका की मित्र श्री कुरंगीबहन देसाई ने किया है |

पूज्य बापूजी खुद ही मनुबहन की 'माँ' बने थे | इससे पुस्तक के नाम की भी सफाई हो जाएगी|

बम्बई, २२-१-१९४९ **- किशोरलाल मशुरुवाला**

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

१. बा और बापू की गोद में

२. बापू माँ बने

३. गीता के गुरु

४. सच्ची शिक्षा कौन सी ?

५. दो डब्बों का परिग्रह

६. अनियमितता गुनाह है

७. पत्थर भूलने का सबक

८. बापू का लोभ

९. कहने से करना अच्छा

१०. सच्चा डोक्टर राम ही है

११. आज का फायदा उठाया जाए

१२. 'अकेला चलो रे'

१३. फूलहार से स्वागत

१४. कलकत्ते का चमत्कार

१५. बापू के जन्मदिन

बापू – मेरी माँ

१. बा और बापू की गोद में

कितने ही पुत्र-पुत्रियों के बापूजी पिता थे, कितने ही शिष्यों के गुरुदेव थे, कितने ही भाई-बहनों के भाई थे, कितने ही भतीजों के काका थे, कितनो के वैध, डोक्टर और सेवक थे, कितनों ही के मित्र थे | कितने ही दुखियों के बेली और तारनहार थे | अधिक क्या कहें, वे राष्ट्रपिता कहलाये जिसमें सब कुछ आ गया | परंतु मेरी तो वे माता थे | साधारणतया होता तो यह है कि पुरुष माता नहीं बन सकता, क्योंकि ईश्वर ने माता का जो वात्सल्यभरा ह्रदय स्त्री को दिया है, वह पुरुष को नहीं दिया | यह बख्शिस सिर्फ माता-जननी-को ही दी है | लेकिन बापू ने पुरुष होकर भी ईश्वर की इस अनोखी देन में हिस्सा बँटाया था |

जिस तरह एक माँ अपनी बच्ची की परवरिश करती है, उसी तरह बापूने मुझे पाला था | यों तो उनके पास कई लड़कियों ने परवरिश पाई है, लेकिन मुझे वे बार-बार कहा करते थे – "मैं तो तुम्हारी माँ बन चुका हूँ न ? वैसे बाप तो बहुतों का बन चुका, लेकिन माँ सर्फ तुम्हारी ही बना हूँ|"

दुनिया का नियम है कि पिता भी अपने बच्चों के जीवन-निर्माण में सब तरह का हिस्सा लेता है| लेकिन लड़कियों के लिए माँ जो काम करती है, उसी पर सब दारमदार रहता है | आज भी जब लड़की ससुराल जाती है और यदि वह होशियार नहीं होती, तो उसकी सास या ननंद ताने मारती है – 'क्या माँने कुछ सिखाया भी है ?' कोई बाप का दोष नहीं निकालता |

१९४२ में पूज्य कस्तूरबा जब जेल में थीं, तब मैं भी नागपुर जेल में थी | मेरी उमर उस वक्त सिर्फ चौदह वर्ष की ही थी | मेरी जन्म देने वाली माँ तो मुझे बारह साल की छोड़कर ही दुनिया से चल बसी थी | पर उसके मीठे आशीर्वाद से कुछ ही समय में मुझे कस्तूरबा की गोद मिल गई | बाने कभी मुझे माँ की कमी न महसूस होने दी | सन् १९४२ की क्रांति में जब अंग्रेज सरकार ने बा-बापू को कैद कर लिया, तब मैं उनसे बिछुड़ गई | लेकिन किस्मत से नौ महीनों के मेरे नागपुर जेल के कारावास के दोनों में मुझे फिर से उस अलौकिक माता की सेवा करने का मौका मिला |

मुझे फिर भाग्य से उस ममतालु माँ की गोद मिली, हालाँकि मुझे स्वपन में भी खयाल न था कि अब मैं बा के दर्शन कर पाऊँगी | मगर आदमी की श्रद्धा बिलकुल निष्फल नहीं होती |

बापू के उपवास के बाद बा को ह्रदय-रोग हो गया था | और उसके बार-बार हमले होते थे | उस समय बा ने कहा कि 'अगर मनु को बुलाया जा सके, तो मुझे वही लड़की चाहिए |' इसी अरसे में बा को ह्रदयरोग का सख्त हमला हुआ | सुशीलाबहन और डो॰ गिल्डर को भी मददगार नर्स की ज़रुरत थी, क्योंकि ये दोनों ही बापू और बा को संभाल रहे थे | उन्होंने सरकार से मेरी माँग की | सरकार तो इस समय उलटी थी | मेरे जैसी नादान बच्ची राजनैतिक बातें क्या समझ सकती थी, जिससे उसे यह डर लगे कि "इसको महात्माजी के पास रखना खतरनाक है !" आखिर राजाजी और देवदास गांधी की सर टोटनहाम और लार्ड लिनलिथगो से इस संबंध में गरमागरम बातें हुई | इसमें वे सफल हुए और मुझे नागपुर जेल से आगाखान महल में भेजा गया | जब मुझे बापू और बा के पास जाने के लिए कहा गया, तो बहुतों को ताज्जुब हुआ और कइयों को तो ईर्ष्या भी हुई थी | लोगों में यह चर्चा भी चली थी कि हम इतने सालों से बापू के पास रहते हैं फिर हमें क्यों नहीं मौका मिला ? यह बच्ची वहाँ पर बा की क्या सेवा करेगी ? लेकिन मैं जितनी श्रद्धा ईश्वर पर रखती हूँ, उतनी ही बचपन से बापू और बा पर रखती आई हूँ |

इससे पहले पूज्य बापू के उपवास के समय जब मेरे पिताजी उनसे मिलने जेल में गए थे, तब बा ने उनसे मेरे हलचाल पूछे थे | उन्होंने कहा था की मनु बहुत कमजोर हो गई है, उसकी आँखें खराब हो गई है | बस, तबसे बा मातृ-ह्रदय आपनी बच्ची को देखने के लिए तरस रहा था | जब मैं आगाखान महल के दरवाजे पर पहुँची, तब बा वहीं दयाभरा चेहरा लिए खड़ी थी | सुपरिण्टेण्डेण्ट जेल के कायदे के अनुसार मेरा सामान जाँचे, तब तक तो बा इतनी अधीर हो गई कि उन्होंने सुपरिण्टेण्डेण्ट से कह दिया – "आप उससे चाबी ले लीजिए और उसे जल्दी अंदर आ जाने दीजिए |"

इन भावनामयी बाकी सतत सेवा करने का सौभाग्य मुझे तेरह महीने तक मिला | पहले की तरह ही मेरा खाना-पीना, पढ़ना-लिखना, काम-आराम सभी बातें बाकी निगरानी में होने लगी | ईश्वर

की इस दया के लिए मैं उसे दिल से प्रणाम किया करती थी | सख्त ठंड हो या दम चलने लगे और नींद न आती हो, तब या तो बा मेरे बिछौने में आ जाती, या फिर मुझे अपने बिछौनें पर ले जाती और कहती – "बेटी, तुम सो जाओ | दिनभर काम करते-करते थक जाती हो | मुझे नींद नहीं आ रही है | इसलिए मैं तुम्हें अपने पास सुला रही हूँ |" और मुझे थपकियाँ देकर इस तरह सुलातीं, जैसे माँ अपने छोटे बच्चे को सुलाती हो |

सन् १९४४ की २२ फरवरी को ईश्वर ने मेरी इस प्रेममयी माता को उठा लिया ! उस दिन मैं तो पत्थर-सी उनकी सिर के पास खड़ी हुई आँसू बहा रही थी और उन्हें बापू की गोद में सिर रखे रामधुन और गीता के पवित्र श्लोकों का पाठ करते हुए इस दुनिया से सदा के लिए बिदा लेते देख रही थी | बा सबसे माफी माँग रही थीं | मुझे भी कहने लगी – "बेटी, तुमने मेरी बहुत सेवा की है | भगवान तुम्हें खूब सुखी रखें !" मेरे पिताजी से कहा – 'अब मनु को ले जाना और पढ़ाना|" बापू से कहा – "अब मैं जाती हूँ |" बापू की आँखों से आँसू की दो बूंदे टपक पड़ी |

(मेरी १४-१५ वर्ष की उम्र में यदि मैंने किसीकी मृत्यु शव या जलती चिता देखी हो, तो सबसे पहले पूज्य कस्तूरबा की और दूसरी बापू की | इसे दुनिया कहती है कि कितनी भाग्यवान लड़की है कि बा और बापू के साथ आखिर तक रही ! मैं अभी तय नहीं कर सकी हूँ कि मैं भाग्यवान हूँ या भाग्यहीन !)

बा के चल बसने के बाद थोड़े वक्त के लिए मेरी ईश्वर के ऊपर श्रद्धा कम हो गई थी | मैं सोचने लगी थी कि "आखिर दम तक मेरी इतनी देखभाल करने वाली माँ को भगवान ने क्यों उठा लिया?" बापू ने मुझे भजन गाने को कहा तो मैंने नदानी से बापू से कहा – "ईश्वर ने मेरी बा को ले लिया, अब मैं उसका नाम भी न लूँगी |" कभी-कभी ऐसी नादानी का अद्भुत नतीजा निकलता है | उसका मुझे खुद अच्छा अनुभव हुआ |

उसी रात को, बा के अग्निदाह के बाद, बापू ने मुझे पास बुलाया और बा की कई चीजें हाथमें दीं| उसमें उनकी हाथीदाँत की दो पुरानी चूड़ियाँ (जिन पर सोने की पट्टियाँ लगी थीं), तुलसी की कण्ठी, उनके सिरका नाड़ा, उनका काम में लिया हुआ कुंकुम, पादुका वगैरा चीजें थीं | वे चीजें

मेरे हाथ में रखते हुए बापू ने मुझे कहा – "देखो बा ने तुम्हारी बहुत तारीफ की है | इसलिए उनकी इन आखरी चीज़ों की मालकिन भी तुम ही हो | मैंने तुम्हें ही देने का निश्चय किया है | अब तुम्हारा काम यह है कि जैसे भरत ने राम के बदले राम की पादुका को गादी पर बैठाकर उनसे प्रेरणा ली थी, वैसे ही तुम भी इस चीज़ों से प्रेरणा लो | और बा कैसी सती थी ! उसका सबूत यह है कि उनकी ये चूड़ियाँ मैंने लकड़ियों की आग में से भी सही-सलामत निकाली है |"*

अब यह चर्चा चली कि सरकार मुझे बापू के पास नहीं रहने देगी, क्योंकि मुझे तो बा के लिए ही यहाँ रखा गया था | मध्यप्रांत की सरकार ने तो मुझे कब से छोड़ दिया था, परंतु बा बीमार थीं इसलिए मैंने उनकी सेवा करने के लिए आगाखान महल में रहने देने की प्रार्थना की थी और वह सरकार ने मंजूर की थी | अब यहाँ मेरी ज़रुरत नहीं थी | इसलिए मेरे मनमें सवाल था कि विधाता ने बा से छुड़ाया तो छुड़ाया, क्या अब बापू से भी छुड़ायेगा ! इसलिए मैं दु:खी हो रही थी | एक दिन तो रात में नींद में चाँक चाँककर उठनी लगी | इसलिए एक-दो मर्तबा सुशीलाबहन और बापू मेरी चारपाई पर आये और मुझे थपथपा कर सुला गये थे | दूसरे दिन बापू का मौनवार था | उन्होंने बड़ी सुबह चार बजे मुझे एक पत्र लिखा :

"चि॰ मनुड़ी,

तुम ठीक से सोयी भी नहीं ? तुम्हें और प्रभावती (श्री जयप्रकाश नारायण की पत्नी) को रखने के बारे में कल लंबा पत्र तो लिखा | लेकिन रात को विचारों के मारे नींद न आई | आखिर प्रकाश दिखाई दिया | यह माँग नहीं की जा सकती | अगर करें तो फिर जेल कैसी ? हमें वियोग सहना ही पड़ेगा | तुम तो समझदार हो | दु:ख भूल जाओ | तुम्हें तो बड़े-बड़े काम करने हैं | रोना छोड़ देना | खुशदिल हो जाओ | बाहर जाकर जो सीख सको सीखना | जितनी सेवा कर ली है उससे अब तो हर हालत में कल्याण ही है | मुझे तुम्हारी बहुत चिंता रहती है | तुम्हारे जैसी तुम ही हो | भोली, सीधी और परोपकारी हो | सेवा को तुमने अपना धर्म बना लिया है | पर तुम अब भी अनपढ़ हो – और मुर्ख भी ! यदि अनपढ़ रह जाओगी, तो पछताओगी | और यदि जिंदा रहा तो मैं भी पछताऊँगा | मुझे तुम्हारे बिना अच्छा न लगेगा; लेकिन अभी तुम्हें मेरे पास रखना

अच्छा नहीं लगता | क्योंकि उसमें दोष है | वह तो मोह कहा जाएगा | अब मुझे लगता है कि तुम्हें राजकोट जाना चाहिए | वहाँ तुम्हें नारणदास का सत्संग मिलेगा (नारणदास गांधी – राजकोट राष्ट्रीय शाला) वहाँ तुम काम की कला सीखोगी और संगीत तो सीख ही सकोगी | और बाकी जो हो सके वह सीखना | कम से कम एक साल तुम राजकोट में रह लोगी, तो समझदार हो जाओगी, फिर कराची जान या कहीं भी जाना | (कराची में मेरे पिताजी थे | बापू के पास आने से पहले मैं उनके पास थी और अंग्रेजी की पाँचवीं क्लास में पढ़ती थी | कराची में गुरुदयाल मल्लिक हैं, पर वे भी अब तो वहाँ रहने वाले नहीं हैं | इसलिए वहाँ सिर्फ पढ़ाई ही मिलेगी | वह भी काम की तो है ही | ज्यादा लड़कियों के बीच रहना भी ठीक है | पर जो तुम्हें राजकोट में मिलेगा, वह और कहीं नहीं | ज्यादा जब मौन खुलेगा तब कहूँगा | तुम्हारी माँ मैं ही हूँ न ? इतना समझ लेगी तो काफ़ी है |

आगाखान महल, पूना, ता॰ २७-२-१९४४ **बापू के आशीर्वाद**

इस पत्र को तुम संभाल कर रखना |”

परंतु मेरे सद्भाग्य थे कि मैं बापू से अलग न की गई | बापू की साथ ही मैं भी आगाखान महल से बाहर आई |

* महाराष्ट्र के रिवाज के अनुसार हमने बा के पेट पर काँच की हरी पाँच चूड़ियाँ, नारियल, तिल वगैरा चीजें बाँधी थी | दूसरे दिन वे सभी चूड़ियाँ राख में से अखण्ड निकली थीं | उनमें से एक आज भी मेरे पास उस सती माता के प्रसाद के रूप में है |

२. बापू माँ बने

बस बा गई उस दिन से बापू ने एक माँ की तरह अपनी १४-१५ साल की बच्ची की देखभाल करना शुरु कर दी | इस उम्र में लड़की सहज ही माँ के पास रहना पसंद करती है और यदि पहले से साथ ही रहती आई हो, तो वह माँ के और भी ज्यादा नजदीक आना चाहती है | इसलिए बापू ने मुझे अपने पास ही पास रखना शुरु किया | मेरे खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, जाने-आने, बीमारी, अभ्यास, यहाँ तक कि मैं हर हफ्ते अपने बाल धोती हूँ या नहीं, इन बातों में उन्होंने बहुत ही सावधानी रखना शुरु किया और यह सावधानी आखिर तक बनी रही |

बापूजी जब नोखाखली गए, तब मैं महुवे (काठियावाड़) में थी | मैंने उन्हें लिखकर उनके पास रहने की इच्छा जाहिर की थी | इसलिए उन्होंने मुझे तार करके बुलाया था | मैं बापू के पास पहुँची तब मैं साड़ी ही पहनती थी | मुझे यों ति खुले सिर फिरने की आदत नहीं है | पर बापू को देखते ही जब मैंने प्रणाम किया, तो मेरा सिर खुल गया था | उसका मुझे तो खयाल तक न था, क्योंकी जैसे ही मैंने बापू की गोद में सिर रखा, उन्होंने मेरा कान खींचकर प्रेम से कहा – “क्यों, आ गई ?” लेकिन उसके बाद रात को (ता॰ ११-१२-१९४६ गुरुवार, श्रीरामपुर) बापू ने मुझे कहा – “गुजराती साड़ी तो उन सेठानियों के काम की है, जिन्हें झूले पर झूलना हो और मोटरों में फिरना हो | फिर गुजरती साड़ी पहनो और सिर न ढंकों तो ऐसा बेहूदा लगता है कि आँखों को देखना नहीं सुहाता | अगर गुजराती साड़ी पहननी ही हो, तो जैसे बा या पुराने जमाने की ओरतें पहनती थीं उस तरह पहननी चाहिए | उनका सिर कभी खुलता ही न था; और अगर खुलता भी तो फौरन वे सावधानी से ढंक लिया करती थीं | इतना सावधान रहना चाहिए |” इतनी बातें कहने पर भी मुझे खयाल नहीं आया कि बापू यह सब क्यों कह रहे हैं | फिर कहने लगे –“मैं जानता हूँ कि साड़ी पहनने में तुम बा और ऐसी औरतों की तरह सावधान नहीं रह सकोगी | इसलिए तुम्हें यदि यहाँ रहना हो, तो जैसे आगाखान महल में पंजाबी कपड़े पहनती थी वैसे ही यहाँ भी पहनने चाहिए | उस वेश में भी खुला सिर रहना अच्छा तो नहीं है | फिर भी तुम्हारे जैसी लड़की के लिए उस वेश में खुला सिर उतना बुरा या बेहूदा नहीं लगेगा, जितना गुजरती

साड़ी में | मैं तुम्हारी माँ बना हूँ न ? इसलिए मुझे तो तुम्हें सब कहना ही चाहिए | तुम खुले सिर क्यों फिरती हो ? आजकल तो बाल छोटे हों या बड़े, सब औरतें नकली बाल या उनकी लंबी चोटियाँ लगाती हैं; और फिर यदि वे सिर ढांक लें तो वे दूसरों को दिखें कैसे ? मैं बहनों में रहने वाला आदमी हूँ | बहनों को समाज में आगे लाने में मेरा हाथ रहा है | एक दिन मैंने ही बा को पारसी औरत जैसी दिखाई देने के लिए मोजे, बूट और वैसे कपड़े पहनना सीखाया था | उस बिचारी को इन सब बातों का कहाँ शौक था ? ईश्वर ने जैसे बाल दिए हों, वैसे ही रखने में सौंदर्य है, नकली बालों में नहीं | आजकल फूलदानी में कागज के फूल रखते हैं; मगर यदि उन्हीं के पास सच्चे फूल रखें, तो आँखों को तो सच्चे फूल ही अच्छे लगेंगे न ? (इस बात पर से बापू एकदम आध्यात्मिकता पर आ गये | बहनों में इतनी कृत्रिमता आ गई है, इसलिए उन पर अत्याचार होता है | इस बात में मुझे कोई शक नहीं है | झूठे हीरा-मोती के जेवर थोड़े समय के लिए चमकेंगे और फिर काले पड़ जाएँगे | और सब नकली चीजें पहनने का शौक हो जाने के कारण उनके जीवन भी नकली हो गए हैं | यह मैं नहीं मानूँगा कि बाहरी वेश में जो नकली हैं, वे अंदर से सच्चे होंगे | इसलिए बहनें आज गिर रही हैं, उनकी बरबादी हो रही है | आज अगर उनके हाथों में हथियार भी दे दिये जाएँ, तो भी वे गुण्डों का मुकाबला नहीं कर सकती | तब यदि बिचारी निहत्थियों पर कोई बलात्कार करे, तो वे कैसे सामना कर सकती हैं ? सीता की मुट्ठीभर हड्डियाँ थीं, उसके पास साधन भी नहीं था और यदि रावण जैसा बलवान चाहता तो उसे चिमटी से मसल डालता| लेकिन वह उसे छू भी नहीं सकता था | इसका कारण क्या था ? यही कि सीता की पवित्रता ऐसी प्रबल थी | आज कहाँ है ऐसी पवित्रता ? आज अगर कोई स्त्री पर बलात्कार होता है तो वह उसके वश में हो जाती है | यहाँ ऐसे कितने ही किस्से हुए है | जब गुण्डे ने कहा, 'शरण में आ, नहीं तो मार डालूँगा', तो मौत के डर से बहुत सी बहनें शरण में चली गई ! इसलिए रामायण में वर्णन किए हुए राम-सीता सचमुच हो गये है या नहीं, यदि हम ऐसी शंका करें और उन्हें काल्पनिक भी मानें, तो भी यह कल्पना कितनी ऊंची है, कितनी भव्य है ! और उसे आचरण में उतारा जा सकता है | सचमुच सीता का पात्र हर बहन के लिए समझने जैसा है !" नकली बाल, जेवर और कपड़े से बापू मुझे कहाँ के कहाँ ले गये | आगे कहने लगे – "और फिर आजकल

नाखून और ओंठ रंगने की फैशन चल निकली है, - क्या नाम है उसका ?" में हँस पड़ी और बोली – "बापूजी, आपने यदि पहले नाम सीखने का कहा होता तो मैं सीख लेती | ओंठ रंगने की चीज को तो लिपस्टिक कहते है, पर नाखूनों को क्या लगाया जाता है यह मैं नहीं जानती |"

"हाँ, हाँ !" बापू बोले – "बिचारी आजकल की बहनें लिपस्टिक से ओंठ रंगती हैं और नाखून रंगती है, पर उन्हें यह देखने की फुरसत नहीं रहती कि खुद कितनी दुबली और फीकी ही हो गई है | पुराने जमाने की औरतों में इतना खून रहता था कि उनके मुँह और नाखून कुदरती तौर से लाल रहा करते थे | हमने पश्चिम का अँधों की तरह अनुकरण किया है | उसमें दोष तो बहनों और पुरुषों दोनों का है | लेकिन बहनों को माफ नहीं किया जा सकता | पश्चिम की अनुशासन में रहना, सभ्यता, विनय, नियमितता, उधमशील सवभाव, लग्नशीलता, नयी बातें सीखने की तमन्ना, मिलनसारी वगैरा कितनी ही बातें सीखने लायक है | लेकिन हमने वह सब तो छोड़ दिया और उनके पफ-पाउडर की फैशन ले ली ! इसलिए मैं तो चिल्ला चिल्लाकर कहता हूँ कि बहनें ही हिंदुस्तान में स्वराज्य और सुराज्य ला सकती हैं | क्योंकि मैं मानता हूँ कि जैसे बिना गृहिणी के घर की व्यवस्था अधूरी रहती है, वैसे बिना बहनों के देश की व्यवस्था भी अधूरी ही रहेगी | मगर वह तब हो सकता है, जब बहनें पवित्र हों | क्या 'पवित्र' शब्द के मेरे अर्थ तुम जानती हो ? जिसे खुद को पवित्र कहना हो, उसमें इतने गुण तो होने ही चाहिए | इन सब गुणों का वर्णन 'पवित्र' इन तीन अक्षरों में ही आ जाता है | हममें विवेक हो तभी पवित्रता आ सकती है | मैं पर्दे-घूँघट का विरोधी हूँ, लेकिन मर्यादा तो होनी ही चाहिए | सवच्छता अंदर की (ह्रदय की) और बाहर की हो, तभी पवित्रता आ सकती है | सुघड़ता होने पर ही पवित्रता आ सकती है | सच्चाई हो तभी पवित्रता आ सकती है | दंभ या दिखावा न हो तभी पवित्रता आ सकती है | स्वभाव हो तभी पवित्रता आ सकती है | और सेवा की तमन्ना हो तभी पवित्रता आ सकती है | पवित्रता में ऐसे-ऐसे कई अर्थ है | और इस बात में शंका नहीं कि जहाँ पवित्रता होती है, वहाँ ईश्वर का साक्षात्कार होता है | बहनों के पास अगर यह एक शस्त्र आ जाए, तो उन्हें न तलवार की ज़रुरत होगी, न भाले की | परंतु लोहे के शस्त्रों की तालीम से पवित्रता की तालीम कही ज्यादा कठिन है | और समझ ली जाए तो बहुत आसान भी है |

“देखो, एक साड़ी में से मैंने तुमको इतना बड़ा सबक सिखा दिया ! क्योंकि मैं तो तुम्हारी माँ बना हूँ न ? इसलिए तुम्हारे शिक्षक चाहे तुम्हारे पिता हों या दादा, माँ की जिम्मेदारी मेरे सिर है | और जब जिम्मेदारी ली है तो वह पूरी करनी ही पड़ेगी | आज तो पाठ मैंने सिखाया है, उसे तुम्हें अपने जीवन में उतारना है; लेकिन उससे पहले मुझे कल डायरी में लिखकर दिखाना, जिससे मैं समझ सकूँगा कि तुमने इतना पचा लिया है |” (उन दिनों मैं रोजाना डायरी लिखती थी | बापू रोज उसे देखकर सही कर देते थे |)

जब बापू ने मुझे जगाया तब रात के साढ़े बारह बजे थे | तब से जो बातें कहना शुरु कीं तो सवा बज गया | इसलिए कहने लगे – “अब तुम सो जाओ | मुझे नींद नहीं आ रही थी, इसलिए तुम्हें जगाया | मुझे विचार आया कि इस लड़की की जिम्मेदारी लेकर जोखम उठाई है, तो उसको सावधान तो कर दूँ | इसलिए मैंने तुम्हें जगाया | अब सो जाओ | ऐसी थी यह मेरी माता | आधी रात को उठा उठाकर मुझे सबक सिखाती थी !

ईश्वर ने आज तो मुझसे तीनों माताओं को छीन लिया | एक गुजराती कवि बोटादकर ने माता के संबंध में गाया है :

‘गंगानां नीर तो वधे-घटे रे लोल
सरखो ए प्रेमनी प्रवाह रे;
जननी नी जोड सखी नहीं जडे रे लोल.’

सचमुच इन तीनों पंक्तियों का मुझे पुरा अनुभव हुआ है | और मेरी तीनों माताओं का प्रेम उनकी आखिरी साँस तक जरा भी कम नहीं हुआ |

३. गीता के गुरु

नोआखली के इतने कामों में भी गीता पढ़ाने के लिए बापू कम से कम दस मिनट तो मुझे रोज देते ही थे |

आगाखान महल में अंकगणित, बीजगणित, भूमिति, भूगोल, इतिहास, विज्ञान, संस्कृत वगैरा तो बापूजी से सीखने का सौभाग्य मुझे मिला था, परंतु उन्होंने खुद मुझे अंग्रेजी कभी नहीं सिखाई | अंग्रेजी आगाखान महल के दूसरे साथी पढ़ाते थे | पूज्य कस्तूरबा की बीमारी और समय के अभाव के कारण बापूजी से एक-एक विषय पढ़ना छुटता गया; फिर भी बापू ने संस्कृत पढ़ाना तो आखिर तक नहीं छोड़ा | यानी मेरे जीवन में गीता पढ़ाने की शुरुआत बापू ने ही की | दूसरे विषय तो प्यारेलालजी, सुशीलाबहन, डो॰ गिल्डर वगैरा दूसरे मेरे साथ रहने वाले भाई-बहन सिखाने लगे | लेकिन “मनु को गीता तो मैं ही सिखाऊँगा” कहकर आखिर तक गीता तो मुझे बापू ही पढ़ाते रहे | ऐसे दूसरे विषयों के तो शाला के दिनों में और उसके बाद भी मेरे अनेकों गुरु बने हैं, लेकिन मैं दावे के साथ कह सकती हूँ कि मेरे गीता के गुरु तो सिर्फ बापू ही रहे – दूसरों की थोड़ी-बहुत मदद उसमें मैंने भले ही ली हो |

आगाखान महल में गीता के शब्दों के उच्चार करना ही सीख पाई थी | नोआखली पहुँचने के बाद एक दिन तो बापू ने छुट्टी मनाने दी | दूसरे दिन कहने लगे – “अब तो तुम्हें मेरे पास आये २४ घण्टे हो गये | यानी तुम पुरानी हो चुकी | बताओ अब गीता की पढ़ाई कहाँ तक पहुँची है ? तुम्हें यहाँ सिर्फ मेरा काम ही नहीं करना है, बल्कि पढ़ना भी है |”

मैंने कहा – “जेल से छूटने के बाद मैंने गीता की पढ़ाई बीच-बीच में अपने आप ही कुछ की है | पर उच्चारण सुधारने के लिए या अर्थ समझने के लिए मैंने किसी को गुरु नहीं बनाया | क्योंकि मेरी ऐसी इच्छा थी कि और विषयों में भले हजारों गुरु हों, लेकिन गीता का गुरु आपके सिवा दूसरा न हो | इसलिए मैं अपने आप ही सच्चे-झूठे उच्चारण करती और अर्थ लगाती रही हूँ, दूसरे की मदद लेकर आगे नहीं बढ़ी |”

इस बात से बापू दु:खी हुए | कहने लगे – "तुम्हारी इस इच्छा में झूठा मोह है | अच्छी चीज सीखने में हजारों क्या, लाखों गुरु भी हम क्यों न करें ? एक छोटे से बच्चे के पास से भी हम क्यों न सीखें ? अच्छी चीज सीखने में शरम किसकी ? मगर जब जागे तभी सबेरा समझकर आज से ही गीता की पढ़ाई फिर से शुरु कर दें | अब उच्चारण सीखना तो तुम्हारे लिए नहीं है; लेकिन मुझे खटकता यह है कि मैंने अभी तक तुम्हें गीता के अर्थ नहीं समझाये | अब तुम्हें रोज गीता के पाँच श्लोक लिखना होंगे | (मैं रोज श्लोक लिखती थी और बापू कितने ही काम में क्यों न हों, फिर भी मेरे लिखे श्लोक देख लेते थे और मेरी भूलें सुधारकर दस्तखत कर दिया करते थे |) जो श्लोक लिखो, उनके अर्थ संधि अलग-अलग करके लिखा करो | गीता का तीसरा अध्याय यज्ञ के बारे में है | गीता का अभ्यास भी एक यज्ञ है | पर यज्ञ क्या है, यह मैं तुम्हें थोड़ा-सा बतलाता हूँ |

"भगवान कहते है कि यज्ञ किए बगैर जो आदमी खाता है, वह चोरी का अन्न खाता है | यह बड़ी महत्त्व की बात है | चोरी का अन्न कच्चे पारे चैसा है | कच्चा पारा हजम नहीं होता | अगर वह खाया जाए, तो अंग-अंग से फूट निकलता है | वैसे ही चोरी के अन्न का असर होता है | अगर आदमी एक क्षण भी यज्ञ किए बगैर रहे, तो वह चोर साबित होता है | यह यज्ञ हम सबको करना चाहिए | सौभाग्य से जिसका दिल ठिकाने हो, उसके लिए यज्ञ आसान चीज है | उसे न धन की ज़रुरत है, न बुद्धि की, न पढ़ाई की | यज्ञ यानी कोई भी परोपकार का काम | जिसका सारा जीवन यज्ञ से भरा हुआ हो उसके लिए कहा जा सकता है कि वह चोरी का अन्न नहीं खाता |

"जो थोड़ा-थोड़ा यज्ञ करता है, वह कम चोरी करता है ऐसा कहा जा सकता है | इस दृष्टि से सोचें तो हम सब थोड़ी-बहुत चोरी करते ही है | जब सवार्थमात्र छोड़ दें, तब ही कहा जा सकता है कि पूरा यज्ञ हुआ | स्वार्थ छोड़ना यानी अहंपन, मेरापन, छोड़ना | 'यह मेरा भाई और वह पराया, यह मेरी बहन और वह परायी' यह भाव दिल में रहना ही न चाहिए | यह वही कर सकता है, जो अपना सब कुछ भगवान को अर्पण कर सकता है | जो सेवा करता है वह ईश्वर को बीच मैं रखकर, उसका सेवक बनकर ही सब काम करता है | वह आदमी सेवाभावना से सब कुछ

करता है | ऐसे आदमी हमेशा सुखी रहते हैं, हमेशा शांत रहते है | उनके लिए सुख और दुःख एक से होते है | वे अपना शरीर, मन, अकल जो कुछ भी पास हो सब परमार्थ में लगाते हैं | ऐसा सच्चा यज्ञ हम सब नहीं कर सकते | अगर हमारे मन में यह भावना हो कि बन सके तो सारे संसार की सेवा करें, तब ऐसा कौनसा काम है जिसे सारे संसार की सेवा के लिए बहुत से आदमी कर सकते हैं ? इस तरह सोचने पर मालूम होता है कि ऐसे कामों में कताई ही मुख्य है | परमार्थ के खयाल से बेशुमार लोग इस काम को कर सकते हैं | इसलिए कहा जा सकता है कि यह मेहनत जगत की सेवा के लिए की गई है | और उससे अनेकों गरीबों का पेट भरता है | अंधे लोग भी यह काम कर सकते है | और हर तार के साथ रामनाथ लिया जा सकता है |

“मैं तुम्हें गीता के अर्थ इस ढंग से समझाना चाहता हूँ | सिर्फ व्याकरण की दृष्टि से नहीं | यह तो मैंने एक उदाहरण दिया है और यज्ञ का सही अर्थ समझाया है | चरखे में यज्ञ है और यज्ञ में चरखा है |”

४. सच्ची शिक्षा कौन सी ?

पीछले प्रकरण में मैंने बताया उस तरह पूज्य बापूजी मुझे पढ़ाया करते थे | फिर भी कभी-कभी मैं उन्हें कहा करती थी – "आपने मेरा पढ़ना छुड़ा दिया (कराची से मुझे अपने पास बुलवा लिया) | मुझे तो परीक्षायें देनी थी |" और उस वक्त तो आज की बहनों की तरह मुझे कुछ डिग्रीयों का मोह भी था | ईश्वर की मुझ पर कितनी मेहरबानी हुई कि उसने मुझे उस मोह से छुड़ा लिया ! और आज मैं यह कहूँ तो अविवेक नहीं माना जाएँगा कि मेरे परम गुरु ने मुझे जो सबक दिया, वह बी. ए. एम. ए. की या लंदन की बड़ी से बड़ी उपाधियों से भी नहीं मिल सकता, और उससे मेरा जीवन सफल हो गया है | यह मेरी मान्यता है | पर यह सब अकल तो आज आई है| उस वक्त तो बापूजी को यही कहती रहती थी – "आपने मुझे पढ़ने नहीं दिया |"

बापू कहते – "पर मुझे तो तुम्हें पढ़ना और गुनना दोनों सिखाना है | उसका क्या होगा ?"

मैं कहती – "देखिए, महादेवकाका इतने पढ़े हुए थे तभी न आपके मंत्री बन सके ? दूसरे भी जो बड़े बने हैं, वे डिग्री पाने के कारण ही आगे बढ़ पाये हैं न ?" बापू हँसते और कहते – "जितने बड़े उतने झूठे ! और तुम 'डिग्री' के बदले 'उपाधि' शब्द इस्तेमाल करो | 'उपाधि' तो सचमुच उपाधि (चिंता) ही है | मैं बैरिस्टर बना उसका मुझे आज भी पश्चात्ताप होता है | और सच पूछो तो मुझे कभी खयाल तक नहीं आता कि मैं बैरिस्टर हूँ |

"इसलिए अब तो मैं अपने अनुभव के आधार पर ही दूसरों को उस 'उपाधि' से बचाने की कोशिश करता हूँ | हाँ, भाषा की दृष्टि से बहुत कुछ जानना ही चाहिए | मगर आज के विश्वविधालयों में जो रट्टूपन चल रहा है और विधार्थी अपने खून का पानी करते हैं, वह मुझे खटकता है | हमारे देश में तो आज रचनात्मक काम की ज़रुरत है | देहातों में कितना ही काम पड़ा है | विधार्थी पढ़ने में अपना जितना समय लगाते हैं, यदि उतना ही समय वे रचनात्मक कामों में देने लगे, तो देश की सूरत बदल जाएँ | हाँ, अगर ज्ञान के लिए पढ़ाई हो तो अलग बात है | तब तो यह मंत्र होना चाहिए कि ज्ञान के लिए पढ़ाई और पढ़ाई के लिए ज्ञान | लेकिन आज तो यह नजर आता है कि इम्तहान के लिए पढ़ाई और पढ़ाई के लिए इम्तहान | और फिर ? फिर उस ज्ञान का उपयोग

पैसे कमाने में किया जाता है | कोई डोक्टर बनता है, तो कोई वकील बनता है, और कोई इंजीनियर बनता है | पास होते ही नौकरी की खोज चलती है | नौकरी यानी मेहनत कर करके मरो और पेट भी न भरे ! आखिर हमारी सारी पढ़ाई के पीछे ध्येय तो यही रहता है कि अच्छी से अच्छी नौकरी कैसे मिले | इसमें अपवाद तो हो ही सकते है | मेरा यह कहने का मतलब कभी नहीं है कि ४० करोड़ में सबके सब यही करते है | पर आज पढ़ाई के पीछे हमेशा का नियम यही है | यह तो बिलकुल गलत धारण है कि एक खास दर्जे तक पढ़ाई करने के बाद ही सेवा हो सकती है | किसी भी स्थिति में आदमी सेवा कर सकता है | ईश्वर ने आदमी को इतनी शक्तियाँ दी हैं कि वह सेवा से बचने के लिए कोई बहाना नहीं बना सकता | यदि ऐसा न हो तो आदमी इतना भयंकर है कि काम टालने के लिए यह कोई न कोई बहाना खोज ही सकता है | तुम देखोगी कि कोई अपने पैसे से सेवा करता होगा, तो कोई तंदुरुस्त शरीर से, और कोई अपनी बुद्धि से | जीभ, हाथ, पाँव, आँख, कान, नाक – सब अंग सेवा में काम आ सकते हैं | ये तो मैंने उदाहरण दिए हैं | इसलिए हमारे पास जितनी भी शक्तियाँ हों, हमें भगवान को चढ़ा देनी चाहिए | तभी हमें पूरे मार्क मिल सकते हैं | जिसमें करोड़ रूपये देने की शक्ति हो वह यदि आधा है करोड़ दे, तो उसे १०० में से ५० मार्क ही मिलेंगे | लेकिन जिसके पास सिर्फ एक पाई देने की शक्ति है और यदि वह पाई ही दे-दे, तो उसको पूरे मार्क मिलेगें |

“व्यव्हार साफ होना चाहिए | स्वार्थ या डर से आदमी जो कुछ करेगा, वह सेवा नहीं कही जा सकती | जहाँ भगवान पर चढ़ा देने की भावना है, वहाँ स्वार्थ हो ही नहीं सकता | सेवा करने वाल इस तरह रोज अपनी शक्ति बढ़ाता है | उधम करता है, वह भी सेवाभाव से ही करता है | इस तरह जो सेवापरायण रहता है, उसके हंसने, खाने, पीने, खेलने, बोलनेहर काम में सेवाभाव रहता है | यानी उसके सब काम निर्दोष होंगे | ऐसे भक्तों को ईश्वर सभी ज़रूरी शक्तियाँ दे रखता है | इसलिए नीचे के श्लोक है :

अनन्यांश्चिचन्तयन्तो माँ ये जना: पुर्यपासते |
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् | |

माच्चिता मद्गतप्राणा बोधयन्त: परस्परम् |
कथयन्तश्च माँ नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ||
तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् |
ददमि बुद्धियोगं तं येन मानुप्यान्ति ते ||

(अर्थ – जो लोग अनन्य भाव से मेरा ही चिंतन करते हुए मेरा भजन करते हैं, ऐसे हमेशा मुझमें ही रत रहने वालों के योगक्षेम का भार मैं उठाता हूँ | मतलब यह कि फल की आशा छोड़कर मेरा काम करो | मुझमें चित्त लीन रखने वाले, मुझ पर प्राण चढ़ा देने वाले, एक-दूसरे को बोध करते हुए, मेरा ही भजन करते हुए संतोष और आनंद में रहते है | इस तरह मुझमें रमे रहने वालों और मुहे प्रेम से भजने वालों को मैं ज्ञान देता हूँ, जिससे वे मुझे पाते है |)

“इन श्लोकों के बारे में जरा सोचो | इनमें आखिरी श्लोक बहुत महत्त्व का है | उसमें गहरी श्रद्धा का काम तो है ही | लेकिन मैं जो बात तुम्हारे मगज मैं ठसाना चाहता हूँ, वह यह है कि इस तरह ईश्वर का काम करने में तुम अपनी पाई हुई डिग्रीयों का कहाँ तक उपयोग करोगी ? शायद आज तुम पढ़ती होती और कॉलेज में जाती होती तो कहाँ होती ? अगर मेरा वश चले तो मैं आज कॉलेज के सब लड़के-लड़कियाँ को देश की इस लड़ाई में लगा दूँ | सचमुच, हमारे विधार्थियों के दिलों से अगर यह डिग्री का मोह चला जाए, तो तुम देखोगी कि दुनिया के नकशे पर आज जो हिंदुस्तान बूंद-सा है वह समुद्र-सा बन जाएँ | ’अपनी चादर देखकर पाँव फैलाना’ यानी अपनी शक्ति के मुताबिक काम करना, यह सुंदर कहावत सिर्फ छोटे कुटुम्ब पर ही नहीं, बल्कि बड़े देशों पर भी लागू होती है | जैसा देश हो वैसे ही उसके रीति-रिवाज और वैसे ही काम काज होने चाहिए | अंग्रेजी का अंधों की तरह अनुकरण करने पर हम अवश्य गिरेंगे | हंस कौवे की चाल चलता, तो वह मर ही जाता न ? मगर वह अपनी चाल से ही चला, इसलिए जीत गया | यह किस्सा तो तुम जानती हो ? किस्से भी किस्सों के लिए नहीं होते | उनमें गहरा उपदेश भरा रहता है | हिंदुस्तान में अलबता बहुत से बुरे रिवाज है | फिर भी अगर वह अपनी चाल से ही चले, तो वह स्थान भोगे जिसकी कल्पना तक नहीं की जा सकती | क्योंकि हिंदुस्तान की संस्कृति बेजोड़

है | मैं जैसे-जैसे तुम्हें गीता समझाता जाऊँगा, वैसे-वैसे उसमें से नये-नये अर्थ निकलते ही रहेंगे| मगर आज तो यदि इतना ही हजम के लोगी तो काफ़ी है | यह सब लिख डालो | लेकिन लिखना सिर्फ लिखने के लिए नहीं होना चाहिए | गीता का अर्थ तो अमल करने के लिए है | आज का सारा पाठ गीता के आधार पर ही है |"

मैंने बापू को जो उलाहना दिया था कि मुझे पढ़ने न दिया, उस पर सारा उपदेश मुझे दिया गया | उसकी कीमत आज मैं चुका नहीं सकती | बापू ऐसे दयालु थे कि उन पर कोई गुस्सा हो, तो उसे वे शहद का पानी समझकर पी जाते थे | हालाँकि बापू के सामने हमें कुछ भी कहने की सवतंत्रता थी, फिर भी ऐसा कहने में मैंने अपनी बालबुद्धि के कारण ही कितना अविवेक किया था, यह खयाल तो मुझे आज ही होता है | कैसी बदकिस्मती है मेरी ! परंतु पुत्र चाहे कुपुत्र हो, लेकिन माता कुमाता नहीं होती |

ये अद्भुत पाठ पढ़ने में उनका क्या संकेत था, सो तो ईश्वर जाने | लेकिन अपनी कामों से छुड़वाकर भी मुझसे वे डायरी अवश्य लिखवाया करते थे | कहीं उनके मनमें यह तो न रहा हो कि 'एक साल दे बाद मैं चला जाऊँगा तो !' उन्हें यह पूर्वदृष्टि ज़रूर हुई होगी, इसीलिए तो मेरे लिए यह डायरी बापू का वसीयतनामा बन गई है |

५. दो डब्बों का परिग्रह

३० मार्च, १९४७ को पूज्य बापू पहले-पहल लॉर्ड माउण्ट बैटन से मिलने जा रहे थे | नोआखली और बिहार के ऐक्य-यज्ञ में पड़ने के बाद यह पहला सफर था | वाइसरोय की ओर से सूचना तो यह थी कि बापू हवाई जहाज से दिल्ली पहुँचे | मगर बापूने यह कहकर हवाई जहाज में जाने से इन्कार किया कि "जिस वाहन में करोड़ों गरीब सफर नहीं कर सकते, उसमें मैं कैसे बैठ सकता हूँ ?" और निश्चय किया कि "मेरा काम तो रेल से भी अच्छी तरह चल जाता है | मैं रेल से ही जाऊँगा |"

गर्मी बहुत थी | सहन नहीं की जा सकती थी | २४ घंटे का रास्ता था | फिर हर स्टेशन पर राष्ट्र के पिता के दर्शन के लिए हज़ारों की भीड़ जमती थी | पर बापू को इन सब तकलीफों की फिकर ही कहाँ थी ? उन्होंने मुझे बुलाया और कहने लगे :

"देखो, इस यज्ञ में तुम अकेली ही मेरे साथ हो | यज्ञ में लगने के बाद यह पहली बार मैं दिल्ली जा रहा हूँ | नोआखली जाते वक्त मैंने निश्चय किया था कि वही 'करना या मरना'; और इसीलिए सब साथियों को अलग कर दिया था | सिर्फ तुम्हें मैंने अपने यज्ञ में शामिल होने दिया | तुम साथ में हो इसलिए जैसे नोआखली सबको छोड़ आया हूँ, उसी तरह देवप्रकाश, हुनर (एक मुस्लिमभाई), मृदुलाबहन वगैरा जो लोग बाकी है, वे यहाँ रह जाएँगे | मृदुलाबहन मेरी ओर से सब काम संभाल लेंगी | लेकिन तुम्हें मैं नहीं छोड़ सकता, न तुम ही यह चाहती हो | इसलिए तुम्हें मेरे साथ आना है | सामान कम से कम लेना, और छोटे से छोटा तीसरे दर्जे का एक डब्बा पसंद कर लेना | मगर देखना, इसमें तुम्हारी कड़ी परीक्षा है, खयाल रखना !"

मैंने सामान तो कम से कम लिया, मगर डब्बा पसंद करते समय खयाल हुए कि हर स्टेशन पर दर्शन करने वालों की भीड़ के कारण बापू घड़ीभर भी आराम नहीं ले पायेंगे | फिर हरिजन फण्ड भी मुझे गिनना पड़ेगा और उसकी आवाज़ होगी | इसलिए मैंने दो भागवाला एक डब्बा पसंद किया | एक में सामान रख लिया और दूसरे में बापू के सोने-बैठने का इन्तजाम कर दिया |

पटने से दिल्ली की गाड़ी सुबह ९.३० को चलती थी | बापू और मैं ९.२५ को स्टेशन पर आये | वहाँ लोगों की भीड़ बहुत थी | फिर भी हम गाड़ी पर चढ़ गए | बापू तो ठहरे मिनट-मिनट का उपयोग करने वाले | उन्होंने पाँच मिनट में हरिजन फण्ड इकट्ठा कर लिया और ९.३० को गाड़ी रवाना हुई |

गर्मी के दिनों में बापू १० बजे भोजन करते थे | मैं सब तैयारियाँ करने के लिए डब्बे के दूसरे हिस्से में गई | थोड़ी देर के बाद बापूजी के पास आई | बापूजी लिखने में लगे थे | मुझे पूछने लगे – "कहाँ थी ?" मैंने कहा – "यहाँ खाना तैयार कर रही थी |" तब उन्होंने खिड़की के बाहर नजर डालकर मुझे देखने को कहा | मुझे भी जरा सा खयाल हो आया कि मेरी कुछ न कुछ भूल हो गई है | मैंने बाहर देखा तो मुझे लोग लटके हुए दिखाई दिए |

मीठी-सी झिड़की देकर बापू मुझे कहने लगे – "क्या इस दूसरे कमरे के लिए तुमने कहा था ?" मैंने कहा – "जी हाँ | मेरा खयाल था कि अगर इसी कमरे में मैं अपना काम करूँ, बरतन मलूं, स्टोव पर दूध गरम करूँ, तो आपको तकलीफ होगी | इसलिए मैंने दो कमरे का डब्बा लिया |'

बापूजी कहने लगे – "कितनी कमजोर दलील है ! इसीका नाम है अंधा प्रेम | तुम जानती हो न कि मेरी तकलीफ बचाने के लिए हवाई जहाज का उपयोग करने से इन्कार करने के बाद स्पेशल रेलगाड़ी से सफर करने की सूचना की गई थी | लेकिन एक स्पेशल ट्रेन के पीछे कितनी गाड़ियाँ रुकें और हजारों का खर्च हो जाए ? यह मुझसे कैसे सहा जाए ? मैं तो बड़ा लोभी हूँ | आज तुमने सिर्फ दूसरा कमरा ही माँगा, लेकिन अगर सलून भी माँगती तो वह भी तुम्हें मिल जाता | मगर क्या यह तुम्हें सोभा देता ? तुम्हारा यह दूसरा कमरा माँगना सलून माँगने के बराबर है | मैं जानता हूँ कि तुम मेरे प्रति अत्यंत प्रेम की वजह से ही यह सब करती हो | लेकिन मुझे तो तुम्हें ऊपर चढ़ाना है, नीचे नहीं गिराना है | तुम्हें भी यह समझ लेना चाहिए | और अगर तुम समझती हो तो मैं इधर कर रहा हूँ और उधर तुम्हरी आँखों से पानी बह रहा है, वह नहीं बहना चाहिए | अब इन सब बातों का प्रायश्चित यही है कि तुम सब सामान इस कमरे में ले लो, और अगले स्टेशन पर स्टेशन मास्टर को मेरे पास बुलाना |"

मैं तो थरथर काँप रही थी | सामान तो हटाया, मगर मुझे बापू की फिकर बनी ही रही कि अब क्या होगा ? कैसे होगा ? दूसरे, यह भी फिकर थी कि कई बार बापू दूसरों की ऐसी छोटी भूलों को अपनी ही समझकर उनके लिए उपवास करते हैं; वैसे कहीं इसके लिए भी अेकाध बार का भोजन न छोड़ दें | इसके अलावा घर के सब काम – पढ़ना, लिखना, मिट्टी का लेप लगाना, कातना, मुझे पढ़ाना – जैसे घर में वैसे ही ट्रेन में भी होते थे !

आखिर स्टेशन आया | बापूने स्टेशन मास्टर को बुलवाया और कहने लगे – "यह लड़की मेरी पोती है | बेचारी भोलीभाली है | शायद यह अभी मुझे समझी नहीं, इसीलिए उसने दो कमरे पसंद किए | इसमें इसका दोष नहीं, दोष मेरा ही है | क्योंकि मेरे शिक्षण में ही कुछ अधूरापन रह गया होगा | अब उसका प्रायश्चित तो हम दोनों को करना ही रहा | हमने दूसरा कमरा खाली कर दिया है | जो लोग गाड़ी पर लटक रहे हैं, उनके लिए इस कमरे का उपयोग कीजिए | तभी मेरा दुःख कम होगा |"

स्टेशन मास्टर ने बहुत मिन्नतें कीं | पर बापूजी कहाँ मानने वाले थे ? स्टेशन मास्टर ने तो यहाँ तक कहा कि उन लोगों के लिए मैं दुसरा डब्बा जुड़वा देता हूँ | बापू ने कहा – "हाँ, दूसरा डब्बा तो जुड़वा ही दीजिए, मगर इस कमरे को भी इस्तेमाल कीजिए | जिस चीज की हमें ज़रुरत न हो वह ज्यादा मिल सकती हो, तो भी उसका उपयोग करने में हिंसा है | मिलने वाली सहूलियतों का दुरूपयोग करवाकर क्या आप इस लड़की को बिगाड़ना चाहते है ?" बेचारे स्टेशन मास्टर शरमिंदा हो गये | उन्हें बापू का कहना मानना पड़ा |

बापू तो सारे हिंदुस्तान के पिता ठहरे | वे आराम से बैठे और उनके बच्चे लटकते हुए सफर करें, यह उनसे कैसा सहा जाता ? इससे लटकते हुए लोगों को जगह मिली और मुझे जीवन का यह अमूल्य सबक मिला कि जो सहूलियतें मिल सकती हैं, उनमें से भी कम से कम अपने उपयोग में लेनी चाहिए | उस समय वह झिड़की कड़ी तो मालूम हुई थी, मगर आज मेरे जीवन में उसकी कीमत लगाईं नहीं जा सकती | बापूने ऐसे बारीकी भरे अहिंसा-पालन से ही अपने जीवन को गढ़ा था | और उसमें से जो थोड़ा भी फायदा उठाने का मौका मुझे मिला, वह सारी उम्र मेरे साथ रहेगा |

६. अनियमितता गुनाह है

नोआखली में पूज्य बापू की एक गाँव से दूसरे गाँव की रोजाना की पैदल यात्रा बराबर सात बजे शुरु होती थी | सात से दो मिनिट भी अगर ज्यादा हो जाते, तो बापूजी को बहुत बुरा लगता था| एक दिन मुझे सामान बाँधने में थोड़ी देर हो गई | क्योंकि कई चीजें ऐसी थीं, जो बापू के उथने के बाद ही बांधी जा सकती थीं | उन्हें रखने में पाँच मिनट लग गए | इसलिए बापूजी मुझे कहने लगे – "देखों, बाहर कीर्तन वाले और गाँव के लोग कब से आकर खड़े हुए है और तुम्हें अभी भी देर है ! ये तो तुमने पाँच सौ आदमियों के पाँच मिनट चुरा लिए | यह कैसे चल सकता है ? मैं जाता हूँ, तुम पीछे से आना | इतना समय फिजूल गया, यह मुझे जरा भी पसंद नहीं | और मैं जा रहा हूँ इससे यह न समझना कि अगर इस तरह रोज देर हुई, तो तुम हमेशा पीछे से आ सकोगी| इस खयाल से तुम पीछे रह सकती हो कि मैं बूढ़ा हूँ और तुम बच्ची हो, इसलिए दौड़कर मुझे रास्ते में पकड़ लोगी | मगर यह गुनाह है | इसलिए हमेशा नियमित रहना चाहिए, सब काम समय पर होना ही चाहिए | किसीसे कहा गया हो कि मैं सात बजे निकलूँगा ही, और अगर सात से दो सेकण्ड भी ज्यादा हो जाएँ, तो वह मुझे चुभता है |

७. पत्थर भूलने का सबक

नोआखली में नारायणपुर नाम का एक गाँव है | रोज की तरह वहाँ बापू सात बजे पहुँचे | एक गरीब जुलाहे के घर पर हम ठहरे | गाँव में जाते ही हमेशा बापूजी गरम पानी से पैर धुलवाते और फिर थोड़ा बहुत अपना लिखने वगैरा का काम करते थे | उतनी देर में मैं उनकी मालिश और नहाने की तैयारी कर लेती थी | उस दिन भी मैंने उसी तरह तैयारी की | बापू नहाते समय साबुन कभी नहीं बरतते, लेकिन एक खुरदरा पत्थर काम में लेते थे | वह पत्थर कई साल पहले मीराबहन ने उन्हें दिया था | मैं उसे पिछले गाँव में भूल आई | स्नान घर में जब मैंने बापू की सब चीजें रखी, तब मुझे उसकी याद आई | मैंने बापू से कहा – "बापूजी, आपका पत्थर मैं कहीं भूल आई हूँ | शायद कल उस जुलाहे के घर में रह गया होगा | अब क्या करूँ ?" बापू थोड़ी देर सोचते रहे | फिर बोले – "तुमने भूल तो की | अब मैं चाहता हूँ कि तुम खुद ही जाओ और उस पत्थर को ढूँढ कर ले आओ | निर्मलबाबू से कह दो | वे मेरा भोजन बना लेंगे | लेकिन पत्थर ढूँढने तो तुम्हें अकेले ही जाना होगा | एक बार ऐसा करोगी, तो दूसरे समय तुम्हें याद रहेगा |"

मैंने डरते-डरते पूछा – "बापूजी, जिस गाँव में इतने स्वयंसेवक हैं, क्या उनमें से किसीको साथ ले जाऊँ ?" बापूने प्रशन किया – "क्यों ?" इसका जवाब मैं न दे सकी |

नोआखली में नारियल और सुपारी के इतने गहरे जंगल है कि अनजान आदमी तो उनमें रास्ता ही भूल जाए | फिर, कौमी तूफान के दिन ठहरे | उस रास्ते पर सब मुसलमानों के ही घर थे, और रास्ता बिलकुल वीरान और उजाड़ था | तब अकेले कैसे जाय जा सकता था ! मगर भूल जो हुई थी | बगैर गये चारा न था | इसलिए मैं तो बापू के 'क्यों?' का जवाब दिए बगैर ही कुछ गुस्से में चल दी | दिल में यह डर भी था कि कहीं से कोई गुण्डे आकर झूम पड़े तो ? लेकिन रामनाम लेते-लेते जिस रास्ते हम आये थे उसी पर पैरों के निशान देखते देखते मैं चलती रही |

किसी तरह उस जुलाहे का घर मिला तो सही | उस घरमें सिर्फ एक बुढ़िया ही रहती थी | उस बुढ़िया को क्या मालूम कि वह पत्थर इतना कीमती होगा ? उस बेचारीने तो उसे फेंक दिया था | मैंने किसी तरह बड़ी मुश्किल से उसे ढूँढा | जब वह मिला तो मेरे आनंद का पार न रहा | उसे

लेकर तुरंत नारायणपुर का रास्ता लिया | सुबह साढ़े नौकी निकली हुई दोपहर को एक बजे नारायणपुर लौटी | भूक खूब जोरों से लगी थी | लेकिन इससे भी ज्यादा दुःख इस बात का था कि इतनी भूल से थोड़ी देर बापू की सेवा नहीं कर पाई | इसलिए बापू को पत्थर देते हुए मुझे रोना आ गया |

बापू मुझे कहने लगे – "देखो, आज तुम्हारी परीक्षा हुई | ईश्वर जो करता है, यह भले के लिए ही करता है | याद है न ? तुम जब पहले दिन मेरे पास आई, तब ही मैंने रात के दो बजे तक तुम्हें समझाया था कि मेरी यात्रा के यज्ञ में शामिल होना बहुत ही हिम्मत का काम है | जरा भी हिम्मत हारोगी तो नापास के दूँगा | इसलिए अगर चाहती हो तो अब भी लौट कर महुवा जा सकती हो| लेकिन यात्रा शुरु होने के बाद कहीं न जा सकोगी | इस पत्थर के निमित्त से आज तुम्हारी पहली परीक्षा हुई | उसमें तुम पास हुई इससे मुझे कितनी खुशी हो रही है | यह पत्थर मेरा पच्चीस साल का साथी है | मैं जेल में, महल में जहाँ भी जाता हूँ, यह पत्थर मेरे साथ ही रहता है | अगर वह गुम हो जाता, तो मुझे और मीराबहन को बहुत दुःख होता | और तुम भी आज एक पाठ सीख गई कि "ऐसे बहुत से पत्थर मिल जाएँगे, दूसरा ढूँढ़ लेंगे' इस खयाल से बेपरवाह नहीं होना चाहिए; लेकिन काम की हर चीज को सँभालना सीखना चाहिए |"

मैंने कहा – "लेकिन बापूजी, अगर कभी मैंने सच्चे ह्रदय से रामनाम लिया हो तो आज ही | उस बीहड़ रास्ते में जाते-जाते दिल काँपता था |"

बापू हँस दिये और बोले – "हाँ, दुःख में ही राम की याद आती है |"

८. बापू का लोभ

एक बार बापू के लिए सुबह पीने का पानी गरम करने में देर हो गई | वहाँ की हवा में बहुत नमी होने से चूल्हा नहीं सुलग रहा था | इसलिए मैंने अपनी एक साड़ी की किनार फाड़कर मिट्टी के तेल में भिगोई | बापूने पीछे से यह देख लिया | मुझसे बोले – "जरा यह चिंदी दिखाना मुझे |" मैंने बताई | उसे उन्होंने खोला और कहने लगे – "अजी वाह ! यह तो नाड़े के लायक चिंदी है | इसे जलाया कैसे जाए ? इसे धोकर सुखा दो | क्या नाड़े बनने जैसी चिंदी चूल्हा सुलगाने के काम में ली जा सकती है ? मैं कितना लोभी हूँ, क्या तुम जानती हो ? गरम पानी अगर जरा देर से मिलेगा तो क्या हुआ ? इस चिंदीने इतना सारा तेल पी लिया ! और कहीं इस चिंदी पर मेरा ध्यान न होता, तो यह जल ही जाती न ?"

मैंने कहा – "बापूजी, अब यह लोभ क्यों किया जाए ?" उन्होंने मजाक उड़ाते हुए कहा – "हाँ, तुम तो उदार बाप की बेटी ठहरी | लेकिन मेरे थोड़े ही बाप बैठे हैं कि मुझे तुम्हारी तरह देते रहें?" इतना कहकर एकदम गंभीर हो गए और बोले – "देखो, मेरे मजाक में भी हमेशा बड़ा गंभीर अर्थ रहता है | यदि वह परखना तुम्हें आ जाएँगा तो मेर लिए काफ़ी है |"

आखिर जब वह चिंदी सुखी और उसका नाड़े के रूप में मुझसे उपयोग करवाया, तब कहीं बापू को संतोष हुआ | और पास में जो घास-फूस था, उससे चूल्हा जलाना भी मुझे उस वक्त सिखाया|

देश की महान समस्याओं में उलझे रहकर भी बापू को ऐसी छोटी-छोटी बातें सिखाने में बड़ा आनंद आता था |

९. कहने से करना अच्छा

बापू हमेशा सफाई का बहुत ध्यान रखा करते थे | बाहर की सफाई तो वे चाहते ही थे, मगर अंदर की सफाई भी उनके कामों का एक खास अंग रहती थी | यदि कोई काम सफाई से न हुआ हो तो बार-बार टोकने के बजाय वे अपने हाथ से करके सामने वाले को सफाई का सबक सिखाते थे|

नोआखली के रास्ते तो संकरी पगडण्डिया थीं | उनमें कोई तो इतनी संकरी होती कि मैं भी बापू के साथ नहीं चल सकती थी | अकेले बापूजी को ही चलना पड़ता था | मेरा सहारा न मिलने के कारण एक हाथ में उन्हें सहारे के लिए लाठी रखनी पड़ती थी | रास्तों में जहाँ-जहाँ थूंक, मलमूत्र वगैरा गंदगी दिखाई देती, तो बापू को बहुत दर्द होता था | उसके बीच हमें नंगे पैर चलना पड़ता था |

एक दिन आस-पास के सूखे पत्ते लेकर बापू पगडण्डी पर पड़ा हुआ मैला अपने हाथों साफ करने लगे | गाँव के लोग देखते ही रह गए | मैं जरा पीछे चल रही थी | जब मैंने देखा तो मैं भी हैरान हो गई | मैंने गुस्से से कहा – “बापू, आप मुझे क्यों शरमा रहे है ? मैं पीछे ही थी, फिर भी आपने मुझे न कहकर खुद ही क्यों साफ कर लिया ?”

इसके जवाब में बापू हँसे और कहने लगे – “तुम कहाँ जानती हो कि मुझे इन कामों में कितना आनंद आता है ? मैं तुम्हें कहूँ उसके बजाय यदि खुद ही कर डालूँ, तो उसमें मुझे कितनी कम तकलीफ हो?” मैंने कहा – “मगर गाँव के लोग जो देख रहे हैं |” बापू ने कहा – “देखना, कल से मुझे इस तरह गंदे रास्ते साफ न करने पड़ेंगे | क्योंकि आज के प्रसंग से इन लोगों को सबक मिलेगा कि यह काम भी कोई हल्का नहीं हैं | इतने पर भी अगर मेरे ही खातिर ये लोग सफाई का काम करेंगे, तो उससे भी मुझे दुःख होगा |”

इस पर मैंने पूछा – “मान लीजिए, कालका दिन गाँव वाले रास्ता साफ करें और फिर वैसा ही रहने दें, तो आप क्या करेंगे ?” इस पर तो उलटे उन्होंने मुझे ही पकड़ लिया | बोले – “तो मैं

तुम्हें देखने के लिए भेजूँगा | और अगर रास्ता इसी तरह गंदा हुआ, तो मैं फिर साफ करने के लिए यहाँ आऊँगा | मेरा काम तो यही है कि गंदे को साफ बनाया जाएँ |"

सचमुच हुआ भी वैसा ही | दूसरे दिन जब मैं देखने गई, तो फिर रास्ता उसी तरह गंदा था | परंतु बापू से कहने के लिए जाने के बजाय मैंने खुद ही उसे साफ कर दिया और फिर लौटी | वापिस जाकर मैंने बापू से कहा – "मैं रास्ता साफ कर आई | गाँव के लोग भी मेरे साथ शामिल हुए थे| और आज तो उन्होंने वचन दिया है कि कल से हम अपने-आप ही साफ कर लेंगे | आपको यहाँ आने की ज़रुरत नहीं है |" बापूजी कहने लगे – "अरे, यह तो मेरा पुण्य तुमने ले लिया | यह रास्ता तो मुझे ही साफ करना था | खैर, दो काम तो हुए ही | एक तो स्वच्छता रहेगी; और दूसरा यदि लोग अपना वचन पालेंगे, तो उन्हें सबक मिल जाएँगा |" उसके बाद वह रास्ता हमेशा साफ रहा |

ऊपर के प्रसंग का जिक्र करते हुए तीन-चार दिन के बाद बापूजी ने कहा – "हमारे काठियावाड़ में भी लोगों में रास्ते गंदे करने की बहुत बूरी आदत है | तुम यह न मानने लगना कि रास्तों और गलियों में जहाँ-तहाँ टट्टी बैठने या थूंकने की आदत नोआखली की लोंगों में ही है | यह गंदी आदत तो हिंदुस्तान में जगह-जगह है | उसमें भी काठियावाड़ में तो विशेष रूप में है | बचपन में मेरी इच्छा थी कि मैं उस आदत को सुधारूँ | लेकिन किस्मत से मैं काठियावाड़ में ज्यादा समय स्थिर नहीं रह पाया | तुम्हें मुझ पर गुस्सा आया, यह ठीक न था | जैसे अपने-आप खाये बिना पेट नहीं भरता, उसी तरह मुझे तो यह आदत पड़ गई है कि जब तक मैं खुद सफाई का काम न कर लूँ, तब तक मुझे संतोष नहीं होता | सफाई के काम में मुझे बेहद आनंद आता है |"

१०. सच्चा डोक्टर राम ही है

नोआखली में आम की नाम का एक गाँव है | वहाँ बापूजी के लिए बकरी का दूध कहीं न मिल सका | सब तरफ तलाश करते-करते जब मैं थक गई, तब आखिर मैंने बापू को यह बात बताई| बापूजी कहने लगे – "तो उसमें क्या हुआ ? नारियल का दूध बकरी के दूध की जगह अच्छी तरह काम दे सकता है | बकरी के घी के बजाय हम नारियल का ताजा तेल निकालकर खायेंगे |"

इसके बाद नारियल का दूध और तेल निकालने का तरीका बापू ने मुझे बताया | मैंने निकालकर उन्हें दिया | बापूजी बकरी का दूध हमेशा आठ औंस लेते थे उसी तरह नारियल का दूध भी आठ औंस लिया | लेकिन हजम करने में बहुत भारी पड़ा और उससे उन्हें दस्त होने लगा | इससे शाम तक इतनी कमजोरी आ गई कि बाहर से झोंपड़ी में आते आते बापू को चक्कर आ गए |

जब-जब बापू को चक्कर आने वाले होते, तब-तब उनके चिह्न पहले ही दिखाई देने लगते थे | उन्हें बहुत ज्यादा जम्हाइयाँ आतीं, पसीना आता, हाथ-पाँव ठंडे से पड़ जाते और कभी-कभी वे आँखें भी फेर लेते थे | इस तरह उनके जम्हाइया लेने से चक्कर आने की सुचना तो मुझे पहले ही मिल चुकी थी | मगर मैं सोच रही थी कि अब बिछौना चार ही फुट तो रहा, वहाँ तक तो बापूजी पहुँज ही जाएँगे | लेकिन मेरा अंदाज गलत निकला | और मेरे सहारे चलते-चलते ही बापूजी लड़खड़ाने लगे | मैंने सावधानी से उनका सिर संभाल रखा और निर्मलबाबू को जोर से पुकारा | वे आये और हम दोनों ने मिलकर उन्हें बिछौने पर सुला दिया | फिर मैंने सोचा – "कहीं बापू ज्यादा बीमार हो गए, तो लोग मुझे मुर्ख कहेंगे | पास के देहात में ही सुशीलाबहन हैं | उन्हें क्यों न बुलवा लूँ ? मैंने चिट्ठी लिखी और उसे भिजवाने के लिए निर्मलबाबू के हाथ में दी ही थी कि इतने में बापू को होश आया और मुझे पुकारा "मनुडी !" (बापूजी जब लाड़ से बुलाते थे, तो मुझे 'मनुडी' कहते थे |) मैं पास गई तो कहने लगे – "तुमने निर्मलबाबू को आवाज़ लगाकर बुलाया, यह मुझे बिलकुल नहीं रूचा | तुम अभी बच्ची हो, इसलिए मैं तुम्हें इसके लिए माफ़ कर सकता हूँ | परंतु तुमसे मेरी उम्मीद तो यही है कि तुम और कुछ न करके सिर्फ सच्चे दिलसे रामनाम लेती रहो | मैं अपने मनमें तो रामनाम ले ही रहा था| पर तुम भी निर्मलबाबू को बुलाने

के बजाय रामनाम शुरु कर देती, तो मुझे बहुत अच्छा लगता | अब देखो यह बात सुशीला से न कहना और न उसे चिट्ठी लिखकर बुलाना | क्योंकि मेरा सच्चा डोक्टर तो मेरा राम ही है | जहाँ तक उसे मुझसे काम लेना होगा, वहाँ तक मुझे जिलायेगा, नहीं तो उठा लेगा |"

'सुशीला को न बुलाना,' यह सुनते ही मैं काँप उठी और मैंने तुरंत निर्मालबाबू के हाथ से चिट्ठी छीन ली | चिट्ठी फट गई | बापू ने पूछा – "क्यों, तुमने चिट्ठी लिख भी डाली न ?" मैंने लाचारी से मंजूर किया | तब कहने लगे – "आज तो तुम्हें और मुझे ईश्वर ने बचा लिया | यह चिट्ठी पढ़कर सुशीला अपना काम छोड़कर मेरे पास दौड़ी आती, वह मुझे बिलकुल पसंद न आता | मुझे तुमसे और अपने-आपसे चिढ़ होती | आज मेरी कसौटी हुई | अगर रामनाम का मंत्र मेरे दिल में पूरा-पूरा रम जाएगा, तो मैं कभी बीमार होकर नहीं मरूँगा | यह नियम सिर्फ मेरे लिए ही नहीं, सबके लिए है | हरएक आदमी को अपनी भूल का नतीजा भोगना ही पड़ता है | मुझे जो दुःख भोगना पड़ा, वह मेरी किसी भूल का ही परिणाम होगा | फिर भी आखिरी दम तक रामनाम का ही स्मरण होना चाहिए | वह भी तोते की तरह नहीं, बल्कि सच्चे दिल से लिया जाना चाहिए | जैसे, रामनाम में एक कथा है कि हनुमान जी को सब सीताजी ने मोती की माला दी, तो उन्होंने उसे तोड़ डाला | क्योंकि उन्हें देखना था कि उसमें राम का नाम है या नहीं | यह बात सच है नहीं, उसकी फिकर हम क्यों करें ? हमें तो इतना ही सीखना है कि हनुमानजी जैसा पहाड़ी शरीर हम अपना न भी बना सकें, फिर भी उनके जैसी आत्मा तो ज़रूर बना सकते हैं | इस उदाहरण को यदि आदमी चाहे तो सिद्ध कर सकता है | हो सकता है, वह सिद्ध न भी कर पावे | लेकिन यदि सिद्ध करने की कोशिश ही करे तो भी काफ़ी है | गीता माता ने कहा ही है कि मनुष्य को कोशिश करनी चाहिए और फल ईश्वर के हाथ में छोड़ देना चाहिए | इसलिए तुम्हें, मुझे और सबको कोशिश तो करनी ही चाहिए | अब तुम समझी न कि मेरी, तुम्हारी या किसीकी बीमारी के बारे में मेरी क्या धारणा है ?"

उसी दिन एक बीमार बहन को पत्र लिखते हुए भी बापू ने यही बात लिखी – "संसार में अगर कोई अचूक दवाई हो, तो वह रामनाम है | इस नाम के रटने वालों को इसका अधिकार प्राप्त

करने के सम्बन्ध मैं जिन-जिन नियमों का पालन करना चाहिए, उन सबका वे पालन करें | मगर यह रामबाण इलाज करने की हम सबमें योग्यता कहाँ है ?" ... (मेरी रोज की नोआखली की डायरी में से)

ऊपर की घटना ३० जनवरी, १९४७ के दिन घटी थी | बापू की मृत्यु से ठीक एक साल पहले !

इस रामनाम में उनकी यह श्रद्धा आखिरी क्षण तक अचल रही | १९४७ की ३०वीं जनवरी को यह मधुर घटना घटी; और १९४८ की ३०वीं जनवरी को बापूने मुझसे कहा कि 'आखिरी दम तक हमें रामनाम रटते रहना चाहिए |' इस तरह आखिरी वक्त भी दो बार बपुर के मुँह से 'रा...म रा ...म |

सुना मेरे ही भाग्य में बदा होगा, इसकी मुझे क्या कल्पना थी ? ईश्वर की गति कैसी गहन है !

११. आज का फायदा उठाया जाए

पूज्य बापू ने अपने सब साथियों को जबसे नोआखली की अलग-अलग गाँवों में बिठा दिया, तब से उन पर काम का बोझ बहुत बढ़ गया था | उन्हें अपने आफिस का काम इतना रहता कि उसे छह आदमी भी मुश्किल से पूरा कर सकते थे | इन छह आदमियों का काम अब अकेले बापू और निर्मलबाबू को ही संभालना पड़ता था | निर्मलबाबू अकेले तो थे ही, साथ ही नये भी थे; और वे भी बंगाली और अंग्रेजी दो भाषाओँ में ही काम कर सकते थे | इसलिए गुजराती, हिंदी, मराठी वगैरा दूसरी भाषाओँ का काम बापू के सिर ही रहता था | इसके सिवा उन्हें लोगों से मिलना होता था और रोज के प्रार्थना-प्रवचन अखबारों में ठीक ढंग से देने के लिए खुद ही देखने पड़ते थे | क्योंकि संवाददाता लोग अक्सर अपने संवादों में उनके प्रवचनों को असरकारक ढंग से नहीं रख पाते थे | कहीं अर्थ का अनर्थ न हो जाएँ, इसका बापू खुद ही ध्यान रखते थे |

सबसे मुश्किल काम तो रोज-रोज सामान बाँधने का और यह देखने का था कि कहीं कोई चीज छुट न जाए | यह सारा भार यों था तो मेरे सिर, फिर भी बापू को चिंता रखनी ही पड़ती, जिससे मैं वक्त पर तैयार हो जाऊँ | जरा भी चैन नहीं था | यह तो सबका अनुभव है कि एक ही गाँव में जब कभी पाँच-सात साल के बाद भी घर बदलना पड़ता है, तो हमें कितनी चिढ़ आती है | फिर यहाँ तो रोजाना बदलने की बात थी |

बहुतों के मनमें सवाल होगा कि ‘बापू का सामान ही कितना हो सकता है ?” लेकिन बात यह थी कि अपनी ज़रुरत की सब चीजें बापू अपने साथ रखते थे, जिससे उन्हें किसी पर बोझ न बनना पड़े | उनकी ज़रुरत चीजों में काजग-पेन्सिल ही नहीं, बल्कि सुई-तागे से लेकर खाना पकाने का ‘कुकर’, पाट, बेलन, तवा, संड़सी, चिमटा, दो तपेली, चाकू, थाली, खाने के लिए पत्थर या मिट्टी का कटोरा, लकड़ी का चम्मच (खाना खाने के लिए), गिलास, नहाने के लिए बालटी, साबुन, ‘कमोड’ वगैरा सब चीजें साथ में रखने की हमें हिदायत दी गई थी | ये चीजें इसलिए नहीं रखी जाती थीं कि नोआखली में सब झोंपड़े जल गये थे और ये कहीं मिल नहीं सकती थी; बल्कि इसलिए कि बापू को अपनी ही चीजों का उपयोग करना पसंद था | वे बिड़लाजी जैसे के महल

मैं ठहरते थे, तब भी अपनी ही चीजों का उपयोग करना पसंद करते थे | इसके अलावा उनके आफिस के काम की एक बगलझोली ऐसी थी, जिसमें से कागज का एक टुकड़ा भी खो जाता, तो उनका सब काम रुक सकता था| इस थैली में गीता, रामायण, बाइबल, कुरानशरीफ, भजनावली; पंडित नेहरु, सरदार पटेल जैसों के पत्र, डाक में आये हुए ऐसे कागज जो लिखने वाले ने पीठ-कोरे छोड़ दिये हों और जिन्हें बापूने उपयोग में लेने के रख छोड़ा हो और कुछ पर तो जवाब लिखना शुरु भी हो चुका हो – ऐसी कितनी ही चीजें रहती थीं | इस किमती थैली की जिम्मेदारी मुझ पर थी | फिर भी बापू कहते रहते कि 'अगर कुछ खो गया तो तुम तो छुट जाओगी, पर क्या मैं भी छुट सकूँगा ?' इस वाक्य से पाठक समझ सकेंगे कि बापू को अपनी थैली की कितनी फिकर रहती थी | फिर मैं यह भी नहीं कह सकती थी कि चलो, एक गाँव में एक ही दिन तो निकालना है; जैसे तैसे चीजें रख ली जाएँ तो क्या बिगड़ेगा ? क्योंकि अचानक ही मेरी व्यवस्था की चाँच हो जाती थी |

नोआखली के इस महायज्ञ में बापू के दिल की कितनी दुःखभरी हालत थी, यह नीचे के पत्र से समझ में जा सकेगा :

"मैं यहाँ के काम को कैसे पार लगा सकता हूँ ? जहाँ देखता हूँ वहाँ आग लगी है | ईश्वर की मेहरबानी है कि वह मुझे निभाये जा रहा है | मेरे सत्य और अहिंसा दोनों आज ऐसे नाजुक घंटे पर तुल रहे हैं, जिस पर मोती तो क्या सिर के बाल का सौवाँ हिस्सा भी रखें, तो उसका भी वजन साफ मालूम हो जाए | कड़ी परीक्षा है | चारों ओर झूठ चल रहा है और बातें बढ़ा कर कही जा रही है | सत्य तो ढूँढे भी नहीं मिलता | अहिंसा के नाम पर हिंसा हो रही है, धर्म के नाम पर अधर्म हो रहा है | परंतु मेरे सत्य और अहिंसा की परीक्षा यहीं हो सकती है न ? इसलिए मैं परीक्षा देने यहाँ बैठा हूँ |"

इस भारी बोझ को पार लगाने के नोआखली में बापू हमेशा दी बजे रात से उठा करते थे | मुझे भी उठाते थे | कड़ी ठंड में इतनी जल्दी बिस्तर से उठने में स्वाभाविक ही मैं तो अलसा भी जाती थी | लेकिन बापू कभी नहीं अलसाते थे | एक दिन मैंने मजाक में बापू से कहा – "बापूजी !

अगर आज रात को घड़ी देखने में भूल हो जाए, या फिर आपकी नींद ही देर से खुले तो मैं प्रसाद बाँटूं |'

बापू हँस दिये और कहने लगे – "भगवान कहाँ तुम्हारे जैसा लालची है ?" और हुआ भी यही | जैसे भगवान को भी मेरे प्रसाद की ज़रुरत न हो ! दूसरे दिन दो बजे और बापू मेरे सिर पर मीठी-सी चपत लगाते हुए कहने लगे – "मनुड़ी, उठो न ! देखो, तुम्हारे भगवान को तुम्हारे प्रसाद का लालच नहीं हुआ न ?" और मुझे लालटेन जलाने के लिए कहा |

बापू रात को सोते समय लालटेन बुझवा देते थे | इस पर मैंने कहा – "क्यों बापू, हम रात को ११ बजे सोते है और दो बजे तो उठ जाते हैं | तब फिर लालटेन धीमे-धीमे जलता रहे, तो उसमें क्या हर्ज है" वे बोले – "तुम्हारी बात तो ठीक है, लेकिन मुझे उतना घासतेल कौन देगा ? न तुम कमाई करती हो, न मैं ! हाँ, तुम्हारे पिता महुवा में कमा रहे हैं, इसलिए तुम्हें ऐसी बातें सूझ सकती हैं | लेकिन तुम्हें पता है कि लालटेन बुझवा देने से मेरे दो काम होते हैं ? एक तो यह कि लालटेन जलाने में तुम्हारी नींद उड़ जाती है, जिससे अगर मुझे कुछ लिखवाना हो, तो तुम बगैर झोंके खाये लिख सकती हो; और घासतेल तो बच ही जाता है | ऐसे मेरे तो 'एक पंथ और दो काज' हो जाते है |"

फिर कहने लगे – "क्या तुम 'एक पंथ दो काज' का अर्थ समझती हो ?" मैंने अपना साधारण अर्थ कहा, लेकिन बापूने तो अलग ही अर्थ बताया – "एक पंथ दो काज यानी ऐसा कौन-सा पंथ है, जिसे अख्तियार करने से हमेशा दो काम हो सकते हों ? दो काम से यह न समझा जाए कि सिर्फ दो ही काम, मगर अनके काम – सौ भी हो सकते हैं | इसलिए हमें ऐसा रास्ता खोजना चाहिए, जिससे बहुत से काम हों | यहाँ नोआखली में हजारों आदमी बरबाद हो गए | इस पर से हमें खयाल आ सकता है कि हमें एक मिनट भी गँवाना नहीं चाहिए | शरीर को ज़रुरत हो उतनी ही नींद ली जाएँ, उतनी ही खुराक ली जाएँ | हमें सब सीमित कर देना चाहिए | क्योंकि भजन में कहा है : 'आजनो लहावो लीजिये रे, काल कोणे दिठी छे' हमें आज का फायदा उठाना चाहिए; कल क्या होगा, यह कौन जानता है ? मैं तुम्हें इस वक्त, रात के दो बजे, ये बातें समझा रहा हूँ,

और ईश्वर को मुझे या तुम्हें इसी समय उठा लेना हो तो उठा ले | यह बात ईश्वर ने अपने ही हाथ में रखी है | इसलिए यह कहावत बहुत समझने लायक है |

“तब वह सुनहला काम कौन-सा है, जिसे करने से अनेक काम हो सकें ? वह काम तो एक ही है, और वह है परोपकार | परोपकार यानी पड़ोसी की सेवा | और वही है ईश्वर-भक्ति | लेकिन भक्ति सिर्फ माला फेरने से या तिलक करने से नहीं होती | तिलक करके यदि हम छुरे भोंकते फिरें, तो वह ढोंग होगा | पर नरसिंह भगत ने कहा है कि भक्ति तो सिर के बदले में ही मिलती है| यह भक्ति या परोपकार अगर तुमसे शरीर से न हो सके, तो मन से तो करना ही चाहिए | उठते-बैठते, खाते-पीते, खेलते-कूदते मन से जगत के कल्याण की इच्छा करनी चाहिए और हमारे हाथ में जो सेवा का काम आवे उसे करते रहना चाहिए | यदि तुम इतना समझ लोगी, तो बहुत सीख सकोगी | ऐसे गूढ़ अर्थ भरे पड़े हैं, हमारी कहावतों में | देखों, मैंने तो छोटे से घासतेल के मजाक में एक सबक सिखा दिया |”

इन महान गुरु ने यह गंभीर पाठ रात के दो बजे, कुदरत की नीरव शांति में बिलकुल धीमे-धीमे स्वर में मुझे करीब २० मिनिट तक पढ़ाया | इतने पर भी बोलते समय उन्हें पूरा खयाल था कि उनकी आवाज से किसीकी नींद में खलल न पड़े |

१२. “एकला चलो रे”

नोआखली में झोंपड़े मिट्टी और नारियल के पत्तों से बने होते है | पक्के मकान कम हैं | जो कुछ थे वे भी नोआखली हत्याकाण्ड के दिनों में जला दिए गये |

श्रीरामपुर गाँव में बापूजी का मुख्य निवासस्थान था | हमारा घर भी मिट्टी का था और उस पर पत्तों का छप्पर था | हमारा यहाँ गुजरात में भी किसानों के ऐसे ही झोंपड़े दिखाई देते हैं | लेकिन श्रीरामपुर के इस झोंपड़े में साथियों ने इतनी व्यवस्था कर दी थी कि जिससे उसमें रहा जा सके| लेकिन जब बापू ने पैदल यात्रा का निश्चय किया, तब तो सबको चिंता होने लगी | क्योंकि एक तो रोज़-रोज़ नये गाँव में रहना था; उसमें भी गाँवों के कितने ही झोंपड़े जला दिये गए थे | वहाँ हवा में भी काफ़ी नमी थी | बारिश भी होती तो मूसलधार | इस हालत में झाड़ों के नीचे तो कैसे रहा जा सकता था ? सबको यही चिंता थी कि बापू रहेंगे कहाँ | विशेष फिकर तो सतीशबाबू को थी, क्योंकि उन पर यात्रा की सारी व्यवस्था करने का भार था | लेकिन वे तो बहुत ही विद्धान और बुद्धिशाली ठहरे | उन्होंने तरकीब करके तुरंत एक चलती फिरती झोंपड़ी (folding hut) तैयार के ली | उसमें खिड़की, दरवाजा, मेरे और बापू के सोने के लिए दो हलकी चारपाइयाँ, जमीन पर बिछाने के लिए घास और चटाई, जिससे जमीन कितनी ही ऊबड़-खाबड़ क्यों न हो तो भी किसी तरह की तकलीफ न मालूम पड़े – सबका सुभीता था | उसमें पीछे नहाने का एक कमरा भी था | ऐसी कलामय चीज उन्होंने बनाई थी | बापूजी इतना जानते थे कि सतीशबाबू झोंपड़ी तैयार कर रहे हैं | मगर यह नहीं मालूम था कि वह झोंपड़ी ऐसी होगी, जिसे आगे जाकर वे ‘महल जैसी झोंपड़ी कहेंगे |

यों तो बापू श्रीरामपुर रहते थे, लेकिन उनकी यात्रा चण्डीपुर से शुरु हुई, जो श्रीरामपुर से दो मील पर है | इसका कारण यह था कि जिस गाँव में बहुत नुकसान हुआ था, वह चण्डीपुर से कुछ नजदीक था | अगर यात्रा श्रीरामपुर से शुरु करते, तो बापू को एक साथ एक दिन में सात-आठ

मील चलना पड़ता | वह उनके लिए बहुत श्रम हो जाता | इसलिए चण्डीपुर में एक रात ठहरने के बाद आगे बढ़े | वैसे चण्डीपुर में भी थोड़ा बहुत नुकसान तो हुआ ही था |

बापू की नोआखली की सच्ची यात्रा चण्डीपुर से शुरु हुई | उस दिन चलने के पहले कई बहनों ने बापू को तिलक किया और सबने प्रार्थना की | बापू की सुचना थी कि उस दिन 'वैष्णवजन तो तेने कहिए' भजन गाया जाएँ | (यह भजन कभी प्रसंग से ही गाया जाता था, हमेशा नहीं |) लेकिन उसमें इतना फर्क कर दिया जाए कि हर कड़ी पर सिलसिले से 'वैष्णव जन' की जगह एक-एक बार 'मुस्लिम जन', 'खिस्ती जन', 'शीख जन' 'पारसी जन', 'हरिना जन', रखा जाएँ| उन्होंने खुद भी गाने में सुर मिलाया था |

चण्डीपुर से बापू ने चप्पल पहनना भी छोड़ दिया | उसका कारण बापू यह बतलाते थे कि 'हम सब मंदिर, मस्जिद, या चर्च में जाते हैं तो चप्पल उतार देते हैं | यानी पवित्र जगह में हम चप्पल नहीं पहनते | तब मैं तो दरिद्रनारायण के पास जा रहा हूँ | जिनके सगे-सम्बन्धी लूट गए हैं, जिनकी स्त्रियों और बच्चों का कतल हुआ है, जिनके पास लाज ढंकने को भी पूरे कपड़े नहीं है, मुझे ऐसी जमीन पर चलना है, ऐसों की मुलाकात लेनी है | मेरे लिए तो यह पवित्र यात्रा है | इसमें चप्पल कैसे पहने जाएँ ?' ये शब्द कहते समय बापू के ह्रदय में इस तरह मंथन हो रहा था, जैसे मक्खन निकालते समय मट्ठे का होता है | उनकी वह करुण आवाज आज़ भी मेरे कान में गूँजती है |

बापू के तलवे तो हमारी हथेली से भी मुलायम थे | उनमें काँटे लग गए थे और बिवाइयाँ भी पड़ गई थीं |

चण्डीपुर से ठीक सुबह ७.३० बजे एक हाथ मेरे कंधे पर रखे और दूसरे हाथ में डण्डा लिए नारियल और सुपारी के वन में सबसे पहले कविवर टागोर का 'एकला चलो रे' गीत गाते हुए बापू ने अपनी यात्रा शुरु की |

जदि तोर डाक शुने केओना आसे
तब एकला चलो रे !

एकला चलो, एकला चलो,

एकला चलो रे ! जदि.

जदि केओ कथा ना कय,

ओरे-ओरे ओ अभागा,

केओ कथा ना कय,

जदि सवाई थाके मुख फिराये

सवाई करे भय;

तबे पराण खुले,

ओ तुइ मुख-फुटे तोर मनेर कथा

एक्ला बलो रे ! जदि.

जदि सवाई फिरे जाए,

ओरे-ओरे ओ अभागा,

सवाई फिरे जाए,

जदि गहन पथे जाबार काले

केओ फिरे ना चाय;

तबे पथेर-काँटा,

ओ तुइ रक्त-माखा चरण तले

एक्ला दलो रे ! जदि.

जदि आलो ना घरे,

ओरे-ओरे ओ अभागा,

आलो ना घरे;

जदि झड़-बादले आंधार राते

दुआर देय घरे;

तबे बज्रानले,

आपन बुकेर पांजर जालिये निये,

एकला जलो रे ! जदि.

हर रोज यात्रा शूरु करने से पहले हम बंगाली में यह गीत गाते थे | उसके बाद सारे रास्ते एक के बाद एक भजन और रामधून गाते हुए जाते थे | रास्ते में जहाँ-जहाँ कतल हुआ हो या हड्डियाँ पड़ी हों या जले हुए झोंपड़े हों, वहाँ बापू देखते जाते थे; और वह सब देखते हुए उनका ह्रदय फटा पड़ता था | उस समय भजनों से ही उन्हें शांति मिलती थी |

७.३० के निकले हुए हम ९.३० को मासीमपुर पहुँचे, जहाँ सबसे ज्यादा नुकसान हुआ था | वह ७ जनवरी १९४७ का दिन था | वहाँ बापू के लिए रहने लायक एक भी स्थान न था | इसलिए सतीशबाबू का दिया हुआ चलता-फिरता झोंपड़ा खड़ा किया गया | बापूने उसमें जाकर उसके कोने-कोने का बारीकी से निरीक्षण किया और फिर पाट पर बैठ कर पैर धुलवाते हुए मुझे कहने लगे – "देखो, सतीशबाबू ने मेरे महल के लिए कितनी मेहनत की है ! और उठाने वालों को जरा भी तकलीफ न हो, ऐसे हिसाब से कितने छोटे-छोटे हिस्से कत दिए हैं ! उन्हें एक छोटा-सा बच्चा भी उठा सकता है | उन्होंने मुझ पर कितना प्रेम बरसाया है ? लेकिन इतने बड़ प्रेम का मैं अकेले ही कैसे उपयोग करूँ ? इसलिए मैंने तो निश्चय कर लिया है कि इस 'महल' को हम दूसरी जगह नहीं ले जाएँगे | यहीं उसका एक छोटा-सा दवाखाना बनवा देंगे, या ऐसे ही किसी दूसरे काम में इसका उपयोग होगा | मैं तो इधर उधर जहाँ भी जगह मिलेगी, वहीँ आराम से पड़ा रहूँगा, और यदि कहीं न मिली, तो इतने झाड़ तो हैं ही | वे हमें कहाँ मना करते हैं ? वहीँ आराम से पड़े रहेंगे| जैसा रामजी को निभाना होगा निभायेंगे | हम उसकी चिंता क्यों करें ? गाँवों में जो कार्यकर्ता गए हैं, उन्हें भी मैंने सूचना दी है कि जिस गाँव में बैठें, उसी गाँव लोगों को उनका पोषण करना चाहिए – जैसे वे अपने कुटुम्बियों का पोषण करते हैं | कार्यकर्ता को उनका कुटुंबी बन जाना चाहिए | यह नहीं कि 'हम भी कुछ कर रहे हैं,' ऐसी भावना वे लोगों को दिखलायें | यदि ऐसा करेंगे तो निभ नहीं सकेंगे | जब वे बीमार भी पड़ें तो वहीँ गाँव में जो वैध-हकीम हों, उनकी दवाई का सेवन करें | अगर कोई न मिले तो कुदरत के पंच महाभूतों से जो मिले, उसीसे संतोष करें | मैंने अपने लिए भी यही नियम रखा है |"

दूसरे दिन बापू ने उस झोंपड़े को साथ न लेने दिया | हम जिस गाँव में जाते, वहीँ किसी भी झोंपड़े में ठहरते थे | इससे फायदा यह हुआ कि हिंदू, मुस्लिम, जुलाहे, कुंभार, हरिजन, नाई, किसान, ब्राह्मण, बनिये, लुहार आदि सब जाति के लोगों के घर ठहरने का मौका मिला | उनमें से कई तो ऐसे भी थे, जिन्होंने नोआखली के कतल में भाग लिया था | इससे लोगों का ह्रदय-परिवर्तन हुआ और वे ऐसा मानने लगे कि मानो बापू को अपने घर ठहराने का मौका मिलाने से उन्हें इसी लोक में अपने पाप का प्रायश्चित्त करने का अवसर मिल गया हो ! इस तरह सब अपने घरों को और अपने-आपको पवित्र करने लगे | इतनी कठिनाइयों के बीच भी बापू इन लोगों के साथ रहने से इनमें ओतप्रोत होने का सौभाग्य पाकर अपने-आपको धन्य समझने लगे | इतने दु:ख में भी उनके चहेरे पर आंनद फूटा पड़ता था |

कितने ही लोग कहते थे कि नोआखली में हत्याकांड भले ही हुआ हो, लेकिन उससे हमारा देश तो बापू के चरणों से पवित्र हुआ !

१३. फूलहार से स्वागत

एक बार देवीपुर (नोआखली का एक गाँव) गाँव के लोगों और कार्यकर्ताओं ने बापू के स्वागत के लिए खूब ठाटबाट किया | उसमें करीब करीब १५०-२०० रूपये खर्च हुए थे | (यह हमें बाद में मालूम हुआ |) रोज तो बापू जिस गाँव में जाते थे, वहाँ की स्त्रियाँ तिलक करके उनका स्वागत करती थीं, और बहुत हुआ तो नारियल के पत्तों से अलग-अलग ढंग से गाँव सजाया जाता था | इसमें बापू को भी एतराज न होता, क्योंकि इसमें पैसे तो खरचने ही नहीं पड़ते थे, सिर्फ मेहनत ही लगती थी | अपनी मेहनत से कुछ भी किया जाएँ, उसके लिए बापू कभी नहीं रोकते थे |

पर देवीपुर में तो लोगोंने खास चांदपुर से फूल-जरी, रेशम की पट्टियाँ, लाल-पीले-हरे कागज वगैरा मोल मँगवाये थे और गाँव सजाया था | इसके अलावा घी और तेल के दीये भी जलाये गये थे | यह सब सजावट देखकर बापू थोड़ी देर के लिए गंभीर हो गए | फिर मुझे यह पता लगाने के लिए कहा कि वहाँ के कायमी कार्यकर्ता कौन हैं ? वहाँ की आबादी कितनी है ? वगैरा-वगैरा | ये सब बातें जानकर मैंने बताया कि इस गाँव में ३०० हिंदू और १५० मुसलमान हैं | हिंदुओं में ब्राह्मण, कायस्थ और क्षुद्र है |

बापूने वहाँ के खास कार्यकर्ता को बुलाकर उलाहना दिया और पूछा – “इस सजावट के लिए तुम पैसा कहाँ से लाये ?...” भाई ने जवाब दिया – “आपके चरण हमारी भूमि पर कहाँ बार-बार पड़ते हैं ? इसलिए हम हिंदुओं में से हर एक ने आठ-आठ आने दिए और जो दे सकता था उसने ज्यादा भी दिए | इस तरह करीब ३०० रूपये इकट्ठे किए और ये सब चीजें खरीद लाये |”

इससे बापू और भी चिढ़े और बोले – “तुम्हारी की हुई यह सब सजावट एक क्षण भर में कुम्हला जाएँगी | इससे तो मुझे यही लगता है कि तुम सब मुझे धोखा दे रहे हो | और मेरी हिम्मत पर यह सब ठाटबाट करके तुम कौमी झगड़े को और भी बढ़ावा दे रहे हो | क्या तुम नहीं जानते कि मैं तो इस समय आग की लपलपाती ज्वालाओं से घिरा हुआ हूँ ? जितने फूलों के हार पहनाये हैं, उनके बजाय यदि इतने ही सूत के हार पहनाते तो मुझे रंज न होता | क्योंकि सूत के हारों से सजावट भी होती है और बाद में वे कपड़े बनाने के काम आते हैं, वे फिजूल नहीं जाते | मैं समझता हूँ कि इस गाँव में पैसे बहुत हैं ! नहीं तो ऐसे मुश्किल समय में यों हार-तोरण लगाना

तुम्हें नहीं सूझता | अगर अपना प्रेम दिखाने के लिए यह सब किया हो, तो यह गलत है | इससे जरा भी प्रेम प्रकट नहीं होता | अगर तुम्हें मुझ पर प्रेम हो, तो मैं जो कहता हूँ वह करो | उतना ही मेरे लिए काफ़ी है | मेरी तो यही समझ में नहीं आता कि इतने कत्लेआम के बाद इतना व्यर्थ खर्च करने का तुम्हें खयाल ही कैसे आया | और फिर तुम तो कोंग्रेस के नामी कार्यकर्ता हो, तुम कहते हो कि तुमने मेरी किताबें पढ़ी हैं, ऐम॰ ए॰ तक पढ़ाई की है, जेल भी हो आये हो, खादी की छोटी-सी धोती पहनते हो ! फिर इस सजावट में विलायती मिलों का रेशम और रिबन वगैरा कैसे लगाये ? मैं तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि मेरी दृष्टि से यह सब दुःखदायी है | तुम पर से मुझे अपने सब कार्यकर्ताओं का अंदाज होता है कि जो कार्यकर्ता एक दिन लोगों के सेवकों के नाम से पहचाने जाते थे उन्हें यदि लोग ओहदे पर बिठाएँ, तो वे यों फूलहार पहनने-पहनाने के लालच में कहीं गिरने न लगें ! मैं देख रहा हूँ कि मैं आज भी छाती ठोककर नहीं कह सकता कि 'कोई भी मेरे किसी भी कार्यकर्ता की परीक्षा ले-ले | वह सादा का सादा ही मिलेगा | उसके पास चाहे कितनी ही मोटरें और बंगले क्यों न हों, वह अपना ध्येय नहीं छोड़ेगा |" लेकिन यह बात नहीं है | अच्छी बात है ! आज के किस्से से मेरी आंखे और भी खुल गई हैं, मैं सावधान हो गया हूँ | इसमें मैं आप लोगों का दोष नहीं मानता | आप तो जैसे थे वैसे दिखे ! उसमें कोई क्या करे? लेकिन इससे ईश्वर मुझे इस बात का भान कराता है कि मैं कहाँ हूँ | अब भी न जाने क्या-क्या देखना बदा है !"

बेचारे कार्यकर्ताओं को क्या पता था कि बापू को इतना दुःख होगा | वे भाई अपना-सी मुँह लेकर वहाँ से गए और आधे घण्टे में सब सजावट निकाल डाली | जो-जो चीजें काम में ली जा सकती थीं वे ले ली गई ! हारों में जितना तागा काम में लिया गया था, बापू ने सबको एक बण्डल बनाने के लिए कहा | वह बण्डल काफ़ी बड़ा था | वह लोगों को सीने के काम में लेने के लिए दिया | उस बण्डल में करीब-करीब १५-२० रील तागा था | अगर बापू इतना न कहते, तो इतना तागा निकम्मा ही चला जाता | उसके बाद के गाँवों में हमेशा हाथकते सूतके हारों से बापू का स्वागत किया जाता रहा | उसका कपड़ा बुनवाकर गरीबों में बांट दिया गया | बापू गरीबों के ऐसे बेली थे !

१४. कलकत्ते का चमत्कार

गये साल १९४७ में जब वर्षों की गुलामी के बाद आज़ादी का दिन आने वाला था, तब इस पूज्य बापू के साथ कलकत्ते में थे |

'१५ अगस्त को नोआखली में शायद फिर कोई आग न भड़क उठे', यह डर नोआखली के हिंदुओं पर हावी था | इसलिए नोआखली जाने के लिए बापू काश्मीर से कलकत्ता पहुँचे |

उस समय कलकत्ते में हिंदू-मुसलमानों का दंगा चल रहा था | इसलिए उस समय के बंगाल के प्रधानमंत्री श्री प्रफुलचंद्र घोषणे बापू की दो दिन रुक जाने के लिए बिनती की | बापू रुक गए | दंगा तो बढ़ता ही जा रहा था | फिर भी बापूने निश्चय कर लिया था कि १५ को नोआखली पहुँच ही जाना चाहिए | हम सब तैयार भी हो गए | इतने में शहीद सुहरावर्दी साहब आ पहुँचे और कहने लगे – "यहाँ जो आग जल रही है, उसे आप के सिवा कोई नहीं बुझा सकता | इसे बुझाने के बाद ही आप नोआखली जाएँ |" बापू ने कहा – "मैं अकेला तो बुझा ही कैसे सकता हूँ ? हाँ, मैं आपके मंत्री का काम कर सकता हूँ | लेकिन मैंने तो नोआखली जाने का वचन दे रेखा है, इसलिए मुझे वहीँ जाना चाहिए | हाँ, अगर आप नोआखली की जिम्मेदारी उठा लें, तो मैं यहाँ ठहरकर इस आग को बुझाने की भरसक कोशिश करने को तैयार हूँ | मगर शर्त यह है कि उसमें आपको मेरे साथ रहना होगा और फकीर बनना पड़ेगा |"

बापू एकदम बोले – "इस भरसक कोशिश से काम नहीं चलेगा; जैसे बिहार वालों ने बचन दिया है कि वहाँ कुछ गड़बड़ हो जाएँ तो मुझे उपवास करने का हक है, उसी तरह नोआखली में भी कुछ गड़बड़ हो तो उसके लिए भी मुझे उपसास करने का हक रहेगा, इसका खयाल रखकर ही आप आप जवाब दीजिए |" ये बातें १३ अगस्त, १९४७ के दिन हुई |

बापू का तरीका कैसा था ? नोआखली के आज तक के हत्याकाण्ड के लिए और आगे जो कुछ भी होगा उस सब के लिए नोआखली वाले ही जवाबदार माने जाएँगे, जब यह बात सामने आई तो शहीद साहब जरा सोच में पड़ गए, हालाँकि उनके लिए नोआखली की जिम्मेदारी लेना कोई भारी काम न था | क्योंकि नोआखली के जितने भी जिम्मेदार मुस्लिम भाई थे, और जिन पर

इलजाम लगे थे, वे सब छुट चुके थे और शहीद साहब की बात मानते थे | मगर अपना काम निकाल लेने की बापू की तरकीब कैसी थी ? जिसने गुनाह किया हो, उसी पर संरक्षण की जिम्मेदारी डाल दी जाएँ ! कोई नौकर घरमें रोज़ थोड़ी-थोड़ी चोरी करता हो, तो बापूजी ऐसे थे कि सारा घर ही उसे सौंप देते और पूरा खतरा उठाकर कह देते – "संभाल तू सब |" इसी तरीके से हमारा देश इतना ऊँचा उठा है |

दूसरे दिन शहीद साहब और उनके साथी आ पहुँचे और सबने कबूल किया – नोआखली में पूर्ण शांति रहे इसकी जिम्मेदारी हमारी है; और आगे के लिए हम खयाल रखेंगे की इसके बाद कभी कुछ न हो | मगर आप यहाँ रह जाइए |" बस, कलकत्ते में बैठकर ही बापू का नोआखली का काम हो गया | सब मुसलमान भाई नोआखली गए और वहाँ के हिंदू भाईयों को दिलासा दिया कि वे डरें नहीं – साथ ही अपनी पूरी मदद देना भी मंजूर किया | इधर सुहरावर्दी साहबने बापू के साथ रहना मंजूर किया; और वह यहाँ तक कि खानापीना, बैठना-उठना, सब बापूजी के साथ ही | इस तरह तय हुआ कि दोनों में से कोई खानगी मुलाकातें भी न ले और अखबारों के बयान भी साथ ही साथ दे | और १४ अगस्त को दोपहर में हम बेलियाघाट के हैदरी मेन्शन में रहने गए| इस मोहल्ले में मुस्लिमभाई नहीं जा सकते थे |

मकान इतना गंदा था कि कुछ हिसाब ही नहीं | इतनी असुविधा तो नोआखली की यात्रा में भी कहीं न हुई थी | एक ही कमरा था | उसमें दर्शन के लिए हजारों लोग आया करते थे | एक मिनट के लिए भी बापू को शांति नहीं मिलती थी | जिस दिन हम वहाँ गए, उस दिन तो कई हिंदू नवयुवक बापू पर बड़े गरम हुए – "आप हिंदुओं के दुश्मन हैं | दो-चार दिनों में थोड़े से मुसलमान मारे गए, तो आप यहाँ आ बैठे ! इसके पहले कहाँ गए थे ?"

बापू हँसे और सबको शांत करते हुए बोले – 'तुम सब जवान हो | लेकिन मेरे सामने बच्चे हो | तुम यहाँ जितने बैठे हो, उन सबसे तो मेरा छोटा लड़का देवदास भी बड़ा है | तुम सब यह क्यों नहीं समझते कि मैं जन्म से हिंदू हूँ; कर्म से हिंदू हूँ; क्या मैं हिंदुओं का दुश्मन बनूँगा ? नोआखली कौन गया था ? और आज भी जाने ही वाला था | लेकिन मुझे तो तुम्हारी मदद चाहिए | मैं कुछ

नहीं कर सकता | यदि रक्षक बनोगे तो तुम्हीं बनोगे; और यदि भक्षक बनोगे तो वह भी तुम्ही बनोगे | यदि तुम भक्षक बनोगे तो मैं खुश होऊँगा | मैं तो अब बुढ़ा हो गया हूँ | मुझे कहाँ जीना है ? बहुत सेवा की | यहाँ तो इसलिए आया हूँ कि अगर समझा सकूँ तो तुम लोगों को समझा दूँ | मैं दोनों का सेवक हूँ | मेरे लिए सब धर्म एक-से हैं | देखो, नोआखली की हमेशा की शांति के लिए मैंने यहाँ बैठे-बैठे व्यवस्था कर ली न ?" ऐसा कहकर शहीद साहब के साथ हुई बात बताई|

"रक्षक भी तुम और भक्षक भी तुम" क्या इस वाक्य से बापू ने भविष्यवाणी की थी ? सचमुच हिंदू ही उनके भक्षक बने !

सब युवक शांत हो गए | फिर तो ये ही लोग शहर में जाकर शांति का संदेश फैलाने लगे | और आज़ादी मिलने के आध घण्टे पहले ही – यानी रात के ११.३० बजे ही – जिस कलकत्ते में हिंदू मुसलमान को नहीं देख सकता था और मुसलमान हिंदू को नहीं, वहाँ 'हिंदू-मुस्लिम भाई-भाई,' हिंदू-मुस्लिम एक हों' के नारे आसमान चीरने लगे | लारियों में हिंदू-मुसलमान कंधे से कंधा मिलाकर आये और बापू के दर्शन करने लगे | सारी रात यही हाल रहा | सारी रात बापूजी सो न सके; क्योंकि हिंदू-मुसलमान भाई ही नहीं, बहनें और बच्चे भी कंधे से कंधा मिलाकर आते और अपनी आज़ादी दिलाने वाले पिता के दर्शन करके मानो प्रतिज्ञा करते कि 'हमारे अपराध क्षमा कीजिए | अब हम फिर कभी ऐसा न करेंगे |' इस तरह का दृश्य था | भले सारे शहरों में रोशनी, जुलूस बगैरा सब उत्सव हुए, लेकिन जो कायमी एकता बापू ने आध घण्टे में पैदा की, उसके सामने रोशनी कितनी फीकी लगती थी ! और इसके बाद नोआखली में आज तक ऐसी कोई महत्त्व की घटना नहीं घटी, जिससे वह माना जा सके कि वहाँ की शांति भंग हुई | सब मिलाकर देखा जाए तो वहाँ शांति ही रही है | वैसे कार्यकर्ता तो वहाँ तब भी थे और अब भी है |

१५ अगस्त को बापूजी ने हमें उपवास करने को कहा था | मैंने पूछा – "बापूजी, आज तो आपको हमें मिठाई खिलानी चाहिए न?" बापू कहने लग – "तुम जानती हो न कि मैं जन्म, शादी और मौत की प्रसंग पर उपवास ही करवाता हूँ ? अच्छे प्रसंगों पर तो हमेशा ही उपवास करवाता हूँ | आज से हमारी जिम्मेदारी कितनी बढ़ रही है ? जैसे एकादाशी के उपवास से भक्ति की ओर मन

झुकता है, वैसे ही आज के उपवास से हमें अपनी जिम्मेदारियों का भान होगा | हमें आज़ादी दिलाने वाला हथियार चरखा है | उसे तो हम आज भूल ही कैसे सकते हैं ? और मौन भी इसलिए कि ईश्वर से प्रार्थना कर सकें – 'हे भगवान, आज से तू हमेशा हमें अपनी जिम्मेदारियों का भान कराते रहना, जिससे सत्ता मिलने के बाद हम मौजशौक में न पड़ जाएँ |' "उसी तरह हमें किसी तरह का घमण्ड भी न होना चाहिए | आज से हम सबको और भी नम्र बनना चाहिए |"

उस समय बापू का चेहरा गंभीर था | उन्होंने आधे घण्टे में जहरभरी हवा अमृतमयी कर दी थी | फिर भी उनके चेहरे पर इसका चिह्न तक न था कि उन्होंने कुछ किया है | कोई उनका अभिनंदन करता तो वे कहते थे – "अकेला आदमी क्या कर सकता है ? मुझे मुबारकबाद किस बाद का दे रहे हैं ? आप सबने मदद की, तभी यह बन पाया है |"

उस दिन हम सबने और बापूने उपवास किया था और कताई का कार्यक्रम रखा था | बंगाल के सब मंत्री बापू को प्रणाम करने आए थे | उन सबसे बापू ने कहा – "देखिए, आप सब आज से कांटो का ताज पहन रहे हैं | जितनी सादगी से आप लोग रहे हैं, उतनी ही सादगी आगे भी रखिए| सत्ता की कुर्सी बड़ी बूरी होती है | जरा भी गर्व न करना, मौजशौक में न फँसना, आप लोगों को तो जनता के सामने सादगी का, नम्रता का, अहिंसा का, सहनशीलता का, आदर्श पेश करना है | देहातों का उद्धार करना है, गरीबों का उद्धार करना है | सत्य को कभी न छोड़ना | आपकी सच्ची परीक्षा आज से होगी | अंग्रेजों के राज्य में एक तरह से परीक्षा थी ही नहीं | आज से तो परीक्षा ही परीक्षा है | उसमें ईश्वर आपको सफल करें |"

सन् १९४७ कि १५ अगस्त को शुक्रवार था | एक साल के बाद हमें ऐसी सीख देने के लिए बापू हमारे बीच क्यों न रहे ? वे तो अपना काम पूरा करके अपनी भविष्यवाणी के अनुसार ही शुक्रवार के दिन हिंदू का भक्ष्य बने | अपने इस पाप का प्रायश्चित्त हम बापू के उस दिन कहे हुए शब्दों को याद करके करें | ईश्वर हमें बापू के रास्ते पर चलने की शक्ति दे !

१५. बापू के जन्मदिन

'बापू के जन्मदिन' शब्द मैंने जान-बुझकर बहुवचन में लिखा है | तारीख के हिसाब से बापू का जन्मदिन २ अक्तूबर को और तिथि के हिसाब से भादों वदी १२ को आता है | सन् १९४७ में तारीख के हिसाब से उनका जन्मदिन पहले आया था |

आज वे जन्मदिन बापू के बिना अंधकारमय आये हैं | गये साल आज बापू ने भविष्यवाणी की थी कि "अगली चरखा द्वादशी को या तो मैं न रहूँगा, अथवा हिंदुस्तान बदल चुका होगा |" लेकिन कौन जानता था कि बापू की यह भविष्यवाणी सच साबित होगी ?

बिड़ला हाउस,
गुरुवार, ता॰ २-१०-१९४७

३.३० बजे प्रार्थना के लिए उठे | हम उठे ही थे कि वहीँ घर के कई लोग प्रार्थना के लिए आ पहुँचे | हम सबने मुँह वगैरा धोकर बारी बारी से बापू की पैर छुए | मैंने हँसते हुए बापू से कहा – "यह कहाँ का न्याय है ? हमारे जन्मदिन पर तो हम सबके पैर छुते हैं और आपके जन्मदिन पर उलटे हमें आपके पैर छूना पड़ रहे हैं |" बापू बोले – "हाँ महात्माओं के लिए हमेशा उलटा ही नियम रहता है | तुम सबने मुझे महात्मा बना दिया है न ? फिर मैं झूठा महात्मा ही क्यों न होऊं ! लेकिन हमारा कायदा यह है कि 'महात्मा' शब्द आया कि सब हो गया | उसका सच्चा-झूठापन देखने की ज़रुरत नहीं |"

इन दिनों बापू को सर्दी, बुखार, खाँसी वगैरा रहती थी | खाँसी तो इतनी आती थी कि देखने वालों को दुःख होता था | फिर भी बापू प्रार्थना के बाद नहीं सोये | रोज़ की डाक और 'हरिजन' पत्रों के लिख लिखने बैठ गये |

बापू की खाँसी मुद्दती थी | तीन हफ्ते की मुद्दत पूरी किए बगैर जाने वाली न थी | लेकिन फिर भी दर्द कुछ कम हो, इसलिए डोक्टरों ने पेनिसिलिन लेने की सलाह दी थी | इस पर बड़ी रिकझिक चली | बापू कहते – "मेरा रामनाम कहाँ गया ? अगर रामनाम दिल में उतर जाएँ, तो उसमें इतनी ताकत है कि खाँसी कल चली जाएँ | और अगर तीन हफ्ते रही, तो मैं सारे संसार से

कहने के लिए तैयार हूँ की मेरा रामनाम झूठा है |" डोक्टर कहते – "वह सब ठीक है, लेकिन विज्ञान ने इतनी खोज की है, उसे आप गलत कैसे कह सकते है ? आप चाहे जितने दिल से रामनाम लेने वाले लाइए, मैं उनमें कॉलरा फैल सकता हूँ |"

बापूने कहा –"यह उद्दण्डता है | विज्ञान को अभी बहुत खोज करना बाकी है | अभी तो सिर्फ उसकी शुरुआत ही हुई है | लेकिन रामनाम अगर श्रद्धा से लिया जाता हो तो दुनिया में कोई बीमार पड़ ही नहीं सकता | इतने स्वच्छ, निष्पाप दुनिया के लोग बन जाएँ, तो मुझे यकीन है कि किसी को कोई बीमारी ही न हो | लेकिन आप सब भूल कर रहे हैं | कल आप अगर मुझे लिवर खिलायें या लिवर अेवस्ट्रैक्ट का इन्जेक्शन दें, तो क्या मुझे विदेश की बनी हुई चीजें लेना चाहिए? हिंदुस्तान बड़ा आलसी देश है, और उसमें भी डोक्टर लोग तो सबसे ज्यादा आलसी हैं; क्योंकि वे अपने देश में कुछ नहीं बना सकते | उन्हें विदेशों की बनी हुई चीजों में ही विश्वास है | कितनी दयाजनक हालात है यह ! हिंदुस्तान क्या भिखारी देशा है ? जहाँ कुदरत तो सब कुछ देती है, फिर भी हमें भीख माँगनी पड़ती है ? सचमुच, इन सब बातों का जब खयाल करता हूँ, तो मुझे बहुत ही दुःख होता है | जब हिंदुस्तान के नसीब खुलने होंगे तब खुलेंगे | अभी क्या कहा जा सकता है ? मैंने तो बहुत किया | अब कुछ करने की इच्छा नहीं होती | अब तो जी चाहता है की इस दुनिया से चला जाऊँ और वह भी राम-राम करते हुए | रामनाम में कितना रहस्य भरा है, यह मैं आप लोगों को समझा नहीं सकता | मुझ में कुशलता नहीं है | आज तो मैं आवां में बैठा हूँ | चारों ओर आग जल रही हैं | आप डोक्टर लोग जैसे विज्ञान की खोज करते हैं, वैसे ही मैं रामनाम की खोज करता हूँ | अगर खोज सका तो ठीक है, नहीं तो खोजते-खोजते मर जाऊँगा | आप सब आज मुझे २ अक्तूबर के निमित्त प्रणाम करने के लिए आये हैं और मुझे समझा रहे हैं, यह तो आपके प्रेम की निशानी है | लेकिन अब मैं तो चाहता हूँ कि या तो अगली चरखा बारस पर मैं यह आग देखने के लिए जिंदा न होऊँगा या हिंदुस्तान बदल गया होगा | इसलिए मेरी लंबी उम्र के लिए प्रार्थना करने के बजाय, मैं जैसी प्रार्थना करता हूँ वैसी ही प्रार्थना आप कीजिए |"

सन् १९४७ को २ अक्तूबर के दिन सुबह ५।। बजे बापूने ये शब्द कहे थे |

हम लोगों में मान्यता है कि नये वर्ष में या किसी मंगल कार्य में अशुभ न बोलना चाहिए, किसी पर गुस्सा न करना चाहिए या रोना नहीं चाहिए | मेरी डायरी में जब बापू के ये शब्द पढ़ती हूँ, तो मुझे लगता है कि इस मान्यता में कुछ तो सचाई है ही | रामनाम को खोजने वाले बापू रामनाम खोजते-खोजते ही चले गए !

७ बजे हम बापू के साथ घूमने गए | हम घूम रहे थे, उसी समय एक अंग्रेज भाई ने बापू की फोटू खींचने की कोशिश की | यह देखकर बापू नाराज हो गए | यों भी बापू को फोटू खींचने वाले बहुत तंग करते थे, इसलिए उनसे बापू को कुछ चिढ़ थी | बापू कहने लगे – "आज तो खास करके ईश्वर का नाम लेना चाहिए | उसके बदले यह हो रहा है !"

इतने में कृपालानीजी, सुचेताबहन वगैरा बहुत से लोग बापू को प्रणाम करने आये | हम सबने उपवास किया था | बापूजी ने भी | मैंने पूछा – "बापू, आप क्यों उपवास करते है ?" बापू कहने लगे – "आज तो कहा जा सकता है कि चरखे का जन्म हुआ है | यह तो परोपकारी देव है | उसके जन्मदिन पर उपवास करके और पवित्र होकर हम बार-बार प्रार्थना करें कि 'हे चरखा देव, अपनी शरण में रखना |' इसी प्रार्थना के लिए मैंने उपवास किया है | इसलिए नहीं कि मेरा जन्मदिन है और उसे मैं महत्त्व का समझ रहा हूँ |"

घूमने के बाद स्नान वगैरा रोज के काम से बापू ८.३० बजे फारिग हुए | मीराबहन ने बापू की बैठक के सामने फूलों से कलामय ढंग से 'ॐ', 'हे राम', और क्रॉस बनाया था | हम सबने बापू को सूतके हार पहनाये और पैर छुए | फिर छोटी-सी प्रार्थना की | प्रार्थना के समय जवाहरलालजी, इन्दिरा गांधी, घनश्यामदासजी बिड़ला और उनका कुटुम्ब कन्हैयालाल मुन्शी, सी. एच. भाभा, डॉ. जीवराज मेहता, सरदार वल्लभभाई पटेल वगैरा कई आदमियों से कमरा भर गया था | सब धर्मों की प्रार्थना करने के बाद सब चले गए | और इधर बापू की खाँसी शुरु हुई |

एक भाई कहने लगे – "बापूजी, आपकी खाँसी अभी नहीं मिटी |" बापू ने जवाब दिया – "राम होगा तो मिटेगी |" नहीं तो मुझे इस खाँसी के साथ जाना अच्छा लगेगा | अब मैं १२५ साल जीना नहीं चाहता | आपको भी आज यही प्रार्थना करनी चाहिए कि 'हे भगवान्, या तो इस बूढ़े

को इस दावानल में से उठा ले, या फिर हिंदुस्तान को अच्छी बुद्धि दे |' मैं अंग्रेजों के साथ की इतनी लड़ाइयों में कभी निराश न हुआ था | लेकिन घरकी बातें किसे कहें ? भाई-भाई को मारना चाहता है | यह देखने के लिए मैं जीना नहीं चाहता |"

ये सब लोग १० बजे गये थे | फिर भी बापू को प्रणाम करने के लिए और ज्यादा लोग आते रहे| काकासाहब, गाडगिल, देवदास गांधी और उनका कुटुम्ब, डॉ. भटनागर, सर दातारसिंह, आर्थर मूर और षण्मुखम् चेट्टी आये| इनके बाद ११.४० को सरदार पटेल, मणिबहन, गणेशदत्त, प्रो॰ अब्दुल मजीद, बर्मा के हाई कमिश्नर एच॰ एल॰ ए॰ आंग और चीन के हाई कमिश्नर डो॰ एम॰ आंग सू आये | वे अपने अपने प्राधानमंत्रीयों के खत और फल लेकर आये थे | इन सबसे मिलते-जुलते मुश्किल से १२-३० को बापू को आराम लेने का समय मिला | पन्द्रह मिनट पाये होंगे कि फिर दर्शन करने वालों का तांता लगा | २ से ३ तक एक घण्टा सामूहिक कताई हुई | ४.१० को लेडी माउण्टबेटन आई और ४.३५ को लौटी | उनके जाने के बाद भी हुमायूं कबीर, श्रीधराणी और फ्रांस के मो॰ लोजीयर और उनकी पत्नी आई | देश परदेश से करीब हजार से भी ज्यादा तार आये थे | बापूजी के पैरों के पास तो रुपयों का ढेर हो गया था | कई बहने अपने जेवर भी दे गई थीं |

२ अक्तूबर का दिन बड़े आनंद से बीता | रात को रेडियो पर सुंदर कार्यक्रम था | मैंने बापू से कहा – "उसमें क्या सुनना ? ये रेडियों के भजन सुनने के बजाय चरखे का संगीत न सुनें ?"

चरखा जयन्ती – भादों वदी बारस – के दिन दिल्ली के गुजरती भाईयों ने एक चंदा इकठ्ठा किया था | बापू की तबियत अच्छी न थी | इसलिए सरदार वल्लभभाई कहने लगे – "इतनी सख्त खाँसी आती है, तब फिर गुजरातीयों की मीटिंग में जाना क्यों मंजूर किया ? पर आप तो इतने लालची हैं कि जहाँ सुना कि फलाँ जगह पैसे मिलेंगे तो मरने पड़े हों तो भी वहां जायेंगे | ऐसे फण्डबण्ड तो होते ही रहेंगे | यों खोंखों करते जाने की क्या ज़रुरत है ? पर मैं जानता हूँ कि आप मेरी बात नहीं मानेंगे |" खूब ही हँसी ऊड़ी | बापू और सरदार का ऐसा ही मीठा संबंध था |

फिर, जब मीटिंग में सरदार से कुछ बोलने को कहा गया तो वहाँ भी मजा आया | सरदार बोले – "आज मेरा थोड़ा ही जन्मदिन है ? आप लोग पैसा इकट्ठा करके दे तो इन महात्मा को रहे है और बोलूँ मैं ? मगर बापू तो बनिये हैं और बनिये लोग बड़े लोभी होते है | देखिए, इतनी खाँसी और कमजोरी में भी आप लोगों को अब मेरी इतनी प्रार्थना है कि इन्हें आराम करने दीजिए |"

बापू ने चरखे को और भी ज्यादा गति देने के लिए याद दिलाई |

जितने चमकते हुए तेजमें उस साल के जन्मदिन मनाए गये, उतने ही अँधेरे में इस वर्ष के जन्मदिन मनाये जाएँगे | पर अँधेरे में भी दिये की ज्योति जैसे बहुत उजेला देती है और उसमें हम संतोष मानते हैं, उसी तरह अगर हम बापू के संस्मरण बार-बार याद करें, उनके रास्ते पर चलें, तो वे हमें उजेला देंगे ही और उसीसे हमें संतोष मानना होगा |

'ईश्वर अल्ल्ला तेरे नाम, सबको सन्मति दे भगवान' आज हम यह उनकी रोज़ की प्यारी प्रार्थना करें और उन्हें प्रणाम करें |

बापूने पिछली चरखा-जयन्ती पर हमें 'या तो हिंदुस्तान शुद्ध बने या मैं न रहूँ', यह प्रार्थना करने के लिए कहा था | हम वही प्रार्थना करके ईश्वर और बापू से कहें कि 'हमें सच्ची राह दिखाओ और हमारे पापों की ओर न देखो !'

* * * * *